सितम्बर 2003
Rs. 10/-
चन्दामामा

विशेष आकर्षण

सम्पुट - १०७ सितम्बर - २००३ सञ्चिका - ९

साहसी

१९

गुरुदक्षिणा

४०

माया सरोवर - २०

१३

अच्छाई की महिमा

९

अन्तरङ्गम्

SUBSCRIPTION

For USA and Canada
Single copy $2
Annual subscription $20

Remittances in favour of Chandmama India Ltd.
to
Subscription Division
CHANDAMAMA INDIA LIMITED
No. 82, Defence Officers Colony
Ekkatuthangal, Chennai - 600 097
E-mail : subscription@chandamama.org

शुल्क

सभी देशों में एयर मेल द्वारा
बारह अंक ९०० रुपये
भारत में बुक पोस्ट द्वारा १२० रुपये
अपनी रकम डिमांड ड्राफ्ट या
मनी-ऑर्डर द्वारा
'चंदामामा इंडिया लिमिटेड'
के नाम भेजें।

संस्थापक
बी. नागिरेड्डी और चक्रपाणि

स्वच्छ विचारों से स्वच्छ परिवेश की ओर

हाल में, संसार के अनेक भाग एक महामारी से प्रभावित थे जिसमें बहुत लोग मौत के शिकार हो गये। वाइरस को अलग करने में कुछ समय लगा। आन्ध्र प्रदेश और महाराष्ट्र में फैले रहस्यमय ज्वर में बहुत से बच्चों की मृत्यु हो गई। डाक्टर और अस्पताल उस रोग से ग्रस्त अन्य लोगों को बचाने में अभी भी लगे हुए हैं।

सामान्य तौर पर यह दावा किया जाता है कि अधिकांश रोग वायु प्रदूषण या जलप्रदूषण या दूषित भोजन से उत्पन्न होते हैं। यहीं पर स्वच्छता एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। यदि हरेक व्यक्ति अपने-अपने घर में और परिवेश और पड़ोस में स्वच्छता का पालन करे तो अधिकांश रोगों को रोका जा सकता है। एक अवसर पर गाँधीजी ने बड़े दुख के साथ कहा था : ''परिवार के सदस्य अपने घरों को स्वच्छ तो रखते हैं लेकिन पड़ोसियों के घरों की स्वच्छता में कोई रुचि नहीं रखते। अपना पर्यावरण स्वच्छ तथा हरा-भरा रखना मुश्किल काम नहीं हो सकता।

मच्छर खड़े पानी में उत्पन्न होते हैं। एक प्रकार का मच्छर बहते पानी में भी पनपता है। नदियों और नहरों के प्रवाहित जल का प्रदूषण हमेशा मनुष्यों के द्वारा ही किया जाता है। इसलिए जनता को ही यह दायित्व लेना चाहिए और आश्वासन देना चाहिए कि ऐसे जलाशयों को दूषित नहीं किया जायेगा। शिक्षित वर्ग के लोगों पर इसकी जिम्मेदारी और बढ़ जाती है।

महात्मा गाँधी ने कहा : ''हमारी स्वच्छता आंतरिक और बाह्य दोनों होनी चाहिए। सचाई पवित्रता की आत्मा है; यह स्वच्छता का ही दूसरा नाम है।'' यदि हम स्वच्छ विचारों का पोषण करें, तो बाह्य रूप से भी हम स्वच्छ रहना चाहेंगे। सचमुच यह कितना सच है कि स्वच्छता में देवत्व का वास है।

Visit us at : http://www.chandamama.org
सम्पादक : *विश्वम*
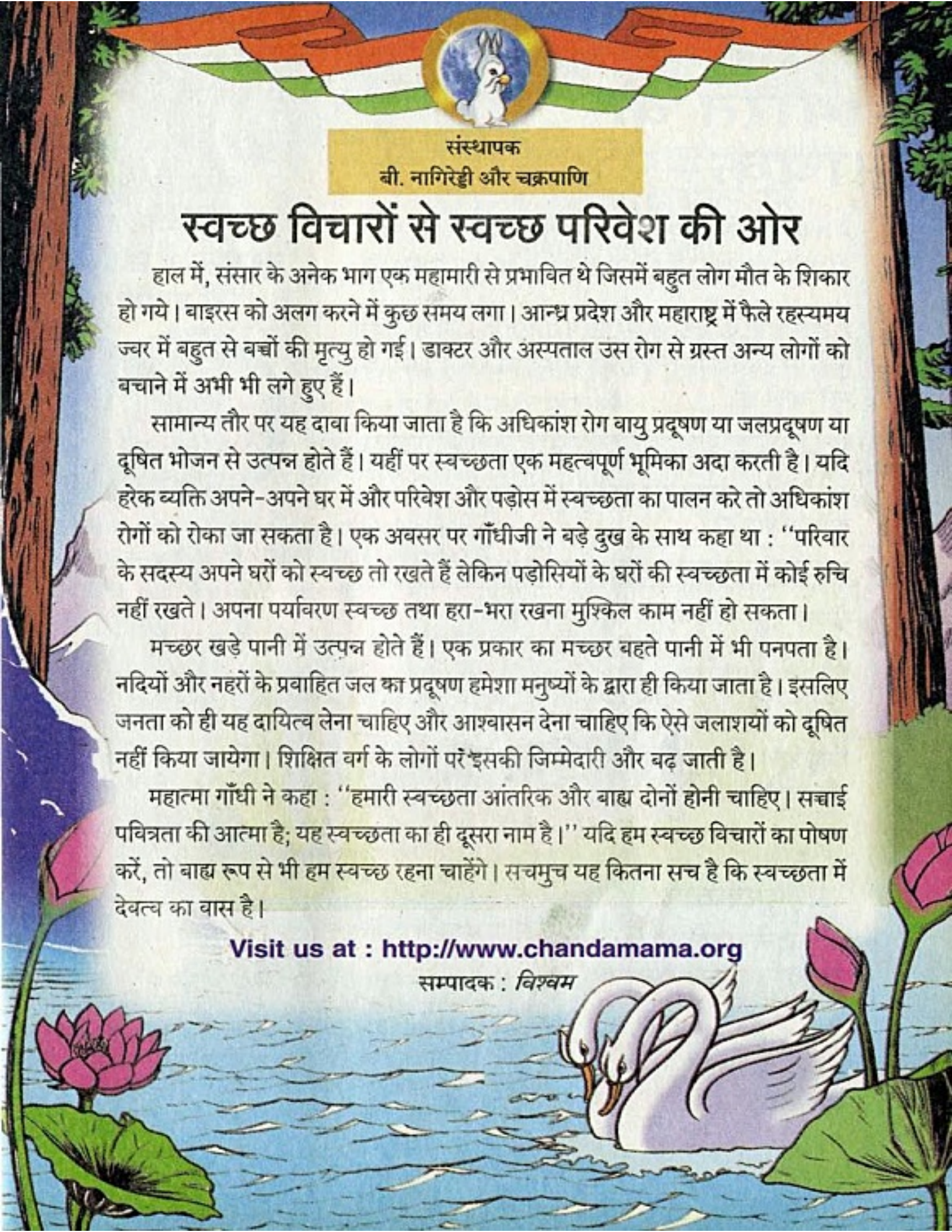
'हीरोज़ ऑफ इंडिया' प्रश्नोत्तरी में अपनी प्रविष्टि भेजें और आश्चर्यजनक पुरस्कार जीतें।

भारत के नायक - २४

यहाँ पुराणों के कुछ तरुण नायकों की चर्चा की गई है। क्या तुम उन्हें जानते हो?

तीन सर्वशुद्ध प्रविष्टियों पर पुरस्कार में साइकिलें दी जायेंगी।

1. मैं अपने गुरु ऋषि धौम्य के खेत को पानी से बचाने के लिए खेत के टूटे मेड़ पर लेट गया। बाद में मैं एक बड़ा ऋषि बना। मैं कौन हूँ?

---

2. मैं अपने शरीर के आठ अंगों से वक्र पैदा हुआ था। मैंने शास्त्रार्थ में बन्दी को हराकर अपने पिता ऋषि कोहड़ को बचाया। क्या तुम मुझे जानते हो?

---

3. मैं ऋषि ऋचिका का मध्यम पुत्र था। विश्वामित्र मेरा चाचा है। मैं अपनी भक्ति के कारण बलि पड़ने से बच गया। मेरा नाम क्या है?

---

4. मैं ऋषि वेद का सर्वोत्तम शिष्य था। मैं पाताल से अपनी गुरु पत्नी के लिए सोने का कर्णफूल ढूँढ़कर लाया। क्या मेरा नाम जानते हो?

---

5. मैं कौरव और पांडव पुत्रों के गुरु का पुत्र हूँ। मैं धनुष विद्या में निपुण हूँ और अमर भी हूँ। मेरा नाम बताओ।

प्रत्येक प्रश्न के नीचे दिये गये स्थान को स्पष्ट अक्षरों में भरें। इन पाँचों में से आपका प्रिय आदर्श नायक कौन है? और क्यों? दस शब्दों में पूरा करें :

मेरा प्रिय तरुण नायक ....है, क्योंकि
....

प्रतियोगी का नाम: ....

उम्र: .... कक्षा: ....

पूरा पता: ....
....

पिन: .... फोन: ....

प्रतियोगी के हस्ताक्षर: ....

अभिभावक के हस्ताक्षर: ....

इस पृष्ठ को काटकर निम्नलिखित पते पर ५ अक्तूबर २००३ से पूर्व भेज दें।

हीरोज़ ऑफ इंडिया प्रश्नोत्तरी-२४
चन्दामामा इन्डिया लि.
नं.८२, डिफेंस ऑफिसर्स कॉलोनी
ईकाटुथांगल, चेन्नई-६०० ०९७.

निर्देश :-

१. यह प्रतियोगिता ८ से १४ वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए है।
२. सभी भाषाओं के संस्करणों से इस प्रतियोगिता के लिए तीन विजेता चुने जायेंगे। विजेताओं को समुचित आकार की साइकिल दी जायेगी। यदि सर्वशुद्ध प्रविष्टियाँ अधिक हुईं तो विजेता का चुनाव 'मेरा प्रिय नायक' के सर्वश्रेष्ठ विवरण पर किया जायेगा।
३. निर्णायकों का निर्णय अंतिम होगा।
४. इस संबंध में कोई पत्राचार नहीं किया जायेगा।
५. विजेताओं को डाक द्वारा सूचित किया जायेगा।

पुरस्कार देनेवाले हैं
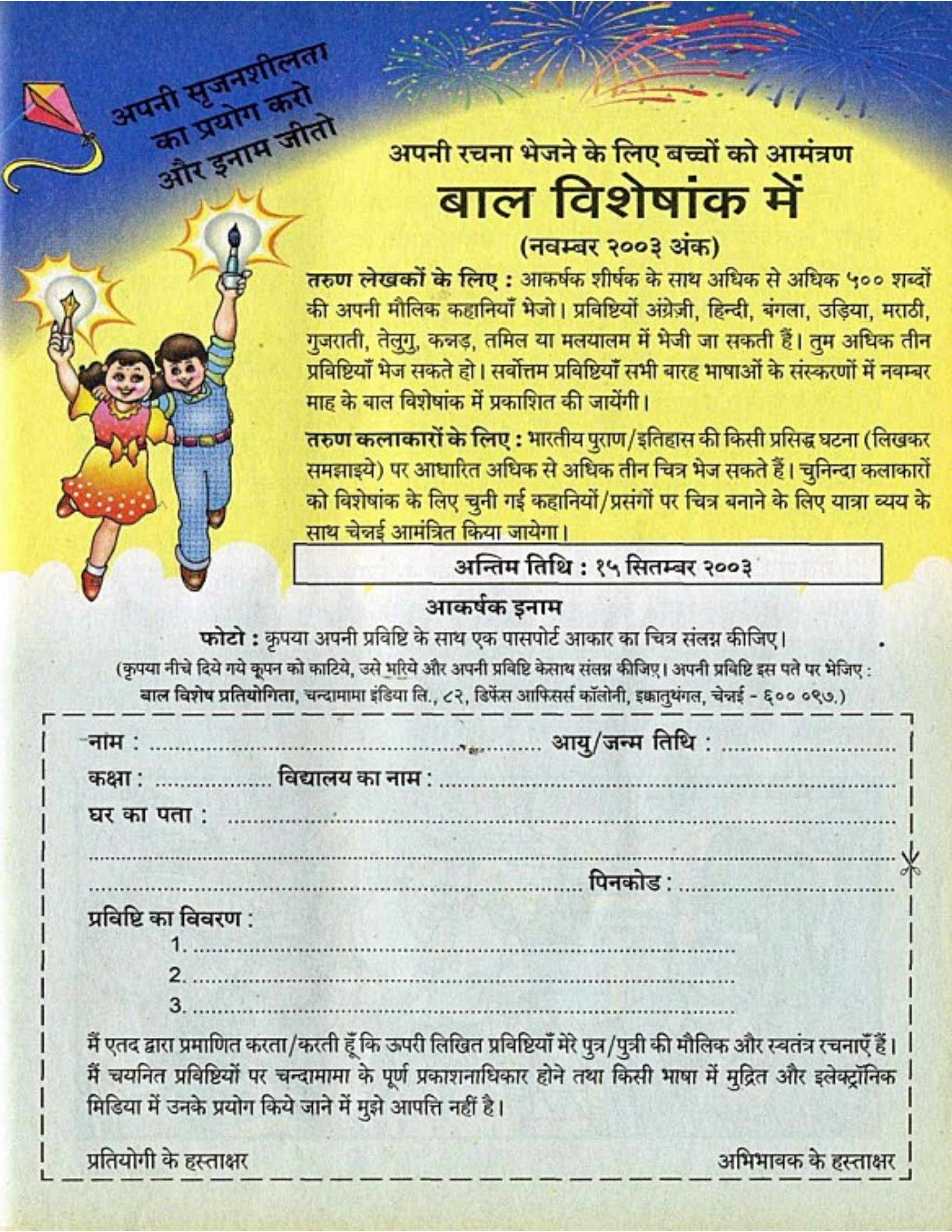
अपनी रचना भेजने के लिए बच्चों को आमंत्रण

बाल विशेषांक में

(नवम्बर २००३ अंक)

तरुण लेखकों के लिए : आकर्षक शीर्षक के साथ अधिक से अधिक ५०० शब्दों की अपनी मौलिक कहानियाँ भेजो। प्रविष्टियाँ अंग्रेज़ी, हिन्दी, बंगला, उड़िया, मराठी, गुजराती, तेलुगु, कन्नड़, तमिल या मलयालम में भेजी जा सकती हैं। तुम अधिक तीन प्रविष्टियाँ भेज सकते हो। सर्वोत्तम प्रविष्टियाँ सभी बारह भाषाओं के संस्करणों में नवम्बर माह के बाल विशेषांक में प्रकाशित की जायेंगी।

तरुण कलाकारों के लिए : भारतीय पुराण/इतिहास की किसी प्रसिद्ध घटना (लिखकर समझाइये) पर आधारित अधिक से अधिक तीन चित्र भेज सकते हैं। चुनिन्दा कलाकारों को विशेषांक के लिए चुनी गई कहानियों/प्रसंगों पर चित्र बनाने के लिए यात्रा व्यय के साथ चेन्नई आमंत्रित किया जायेगा।

अन्तिम तिथि : १५ सितम्बर २००३

आकर्षक इनाम

फोटो : कृपया अपनी प्रविष्टि के साथ एक पासपोर्ट आकार का चित्र संलग्न कीजिए।

(कृपया नीचे दिये गये कूपन को काटिये, उसे भरिये और अपनी प्रविष्टि केसाथ संलग्न कीजिए। अपनी प्रविष्टि इस पते पर भेजिए : बाल विशेष प्रतियोगिता, चन्दामामा इंडिया लि., ८२, डिफेंस आफिसर्स कॉलोनी, इकातुथंगल, चेन्नई - ६०० ०९७.)

नाम : .... आयु/जन्म तिथि : ....

कक्षा : .... विद्यालय का नाम : ....

घर का पता : ....

....

.... पिनकोड : ....

प्रविष्टि का विवरण :

1. ....

2. ....

3. ....

मैं एतद द्वारा प्रमाणित करता/करती हूँ कि ऊपरी लिखित प्रविष्टियाँ मेरे पुत्र/पुत्री की मौलिक और स्वतंत्र रचनाएँ हैं। मैं चयनित प्रविष्टियों पर चन्दामामा के पूर्ण प्रकाशनाधिकार होने तथा किसी भाषा में मुद्रित और इलेक्ट्रॉनिक मिडिया में उनके प्रयोग किये जाने में मुझे आपत्ति नहीं है।

प्रतियोगी के हस्ताक्षर   अभिभावक के हस्ताक्षर

दलपति का अभिप्राय

अनंतवर्मा सौवीर देश का शासक था। चंद्रपाल उसका अश्व दलपति था।अड़ोस-पड़ोस के राज्यों से अक़्सर सौवीर देश को लड़ना पड़ता था। उन युद्धों में दलपति चंद्रपाल शत्रुओं पर आक्रमण करने में और उनके छक्के छुड़ाने में अद्भुत कौशल दिखाता था। इसी कारण हरे-भरे सौवीर देश पर हमला करने से शत्रु राजा डरते थे।

चंद्रपाल वृद्ध हो गया। उसने विश्राम लेने का निर्णय ले लिया। राजा से उसने विनती की कि उसे अवकाश ग्रहण की अनुमति दी जाए। राजा भी विवश थे। उन्होंने इसकी अनुमति देते हुए चंद्रपाल से कहा, ''चंद्रपाल, मैं तुम्हारी इच्छा को अस्वीकार नहीं कर सकता। मैं समझता हूँ कि तुम्हारे बाद गौरीनाथ दलपति होने के योग्य है। उसके बारे में अपनी राय बता सकते हो?''

''मेरी राय में गौरीनाथ इसके योग्य है,'' चंद्रपाल ने कहा। उस समय प्रधानमंत्री राजा के ही बग़ल में बैठा हुआ था। उसने तुरंत कहा, ''परंतु गौरीनाथ तुम्हारे बारे में अच्छा विचार नहीं रखता।''

चंद्रपाल ने कहा, ''महाराज गौरीनाथ के बारे में मेरा विचार जानना चाहते हैं। वे उसका विचार थोड़े ही जानना चाहते हैं।''

- कौसल्या

अच्छाई की महिमा

विष्णुस्वामी रामापुर का निवासी था। बच्चे जब छोटे थे, तभी ज़मींदार ने कृष्णापुर में उसे रहने के लिए जगह और पाँच एकड़ उपजाऊ भूमि भी दी। इसलिए वह कृष्णापुर में आकर बस गया।

अब उसकी दो लड़कियाँ बालिग़ हो गयी थीं और उनकी शादी अच्छे घरानों में हो गई थी। उनका एकमात्र बेटा माधव भी शादी की उम्र का हो गया। वह भी पिता विष्णुस्वामी की कोटि का विद्वान था। वह सौम्य और सुशील भी था। इसलिए उससे अपनी बेटी का विवाह करने का प्रस्ताव लेकर लोग आने लगे।

ऐसी स्थिति में, एक दिन विष्णुस्वामी की पत्नी महालक्ष्मी ने अपने बेटे से कहा, ''बेटे, कितने ही लोग अपनी बेटी की शादी तुमसे करने आ रहे हैं। इसी विषय में मुझे तुमसे एक ज़रूरी बात कहनी है।

''तुम तो जानते ही हो कि हम पहले रामापुर में रहते थे। तब तुम छोटे थे। हमारे घर के बग़ल में रामशास्त्री रहा करते थे। उनका परिवार बड़ा था। उनकी संतान पाँच थी और पाँचों लड़कियाँ थीं। लक्ष्मी और सरस्वती दोनों की उनपर कृपा-दृष्टि नहीं थी, इसलिए हम अक्सर उस परिवार की मदद किया करते थे। उनकी तीसरी बेटी श्रीदेवी तब पाँच साल की बालिका थी। बड़ी ही सुंदर थी, हमारे घर में आकर अक्सर खेलती-कूदती थी।

उसकी बातें मिठास से भरी होती थीं। मुझे वह बहुत अच्छी लगती थी। ''मेरी बहू'' कहकर मैं उसे चूमा करती थी। अपनी ही संतान के समान मैं उसकी भी देखभाल करती रहती थी।

कृष्णापुर आने के पहले जब मैंने देखा कि रामशास्त्री की पत्नी को हमारे जाने का बहुत दुख हो रहा है तो मैंने उसे सांत्वना देते हुए

उसकी बातें उसे कड़ुवी लगीं। जब उसने कारण बताने पर ज़ोर दिया तब माधव ने कहा, ''माँ, हमारा परिवार विद्वानों का परिवार है। इसलिए अच्छा इसी में है कि इस घर में आनेवाली बहू भी विदुषी और सुशील हो। इसीलिए रामशर्माजी ने जब मुझसे अपनी पुत्री शारदा के साथ विवाह रचाने की बात की तो मैं 'न' नहीं कह सका। इसका यह भी मतलब नहीं कि मैंने 'हाँ' कह दिया। दशहरे के बाद वे यहाँ आनेवाले हैं और आपसे इस विषय में बात करनेवाले हैं।''

महालक्ष्मी मुँह सीकर चुप रह गयी। इधर राजधानी में संपन्न विद्वानों की सभा में विजयी होकर लौटने के बाद रामशर्मा व शारदा को लेकर माँ और बेटे के बीच में अक़्सर बातें होती रहीं। रामशर्मा आस्थान पंडित थे। उसकी पुत्री शारदा भी विदुषी थी। आस्थान में हाल ही में जो विद्वत्त सभाएँ संपन्न हुईं उनमें शारदा ने अपने शास्त्र ज्ञान तथा वाकचातुर्य से माधव के सिवा सबको हरा दिया। अपनी पुत्री को हरानेवाले माधव का अभिनंदन करते हुए रामशर्मा ने उसे अपने घर आने का न्योता दिया।

माँ के चेहरे पर बदलते हाव-भावों को देखते हुए माधव ने कहा, ''माँ, तुम मुझे ग़लत न समझना। यह मत समझना कि इस विषय में स्वतंत्र होकर व्यवहार कर रहा हूँ। आप मुझे ग़लत न समझें, इसीलिए मैंने रामशर्मा के प्रस्ताव

कहा, ''दुखी क्यों होती हो। हमारे चले जाने से हमारे रिश्ते हमेशा के लिए थोड़े ही टूट जायेंगे। श्रीदेवी को मैं अवश्य अपनी बहू बनाऊँगी।

''तुम्हारे पिताजी ने भी इसके लिए अपनी सहमति दे दी। इसलिए अन्य विवाह प्रस्तावों के बारे में सोचने के पहले एक बार रामापुर हो आयेंगे और लड़की को देख आयेंगे।''

माँ की बातें सुनकर माधव स्तब्ध रह गया। उसने धीमे स्वर में कहा, ''अपने वचन की बात आप लोग मुझसे पहले ही कहते तो अच्छा होता।''

महालक्ष्मी को यह जानने में देर नहीं लगी कि माधव को यह रिश्ता पसंद नहीं आया और

की बात आपसे नहीं कही। मेरे हृदय में आपके प्रति वही श्रद्धा-भक्ति है, जो पहले थी।''

लंबी साँस खींचते हुए महालक्ष्मी ने कहा, ''ठीक है। पहले ये सारी बातें अपने पिताजी से कहना। इसका निर्णय वे ही करेंगे।''

पर यह सब हो चुकने के बाद विष्णुस्वामी भी किसी निर्णय पर नहीं आ पाया। माता-पिता की मानसिक स्थिति को देखते हुए माधव ने स्वयं निर्णय लिया और कहा, ''माँ, तुमने रामशास्त्रीजी को जैसा वचन दिया, वैसा कोई वचन मैंने रामशर्माजी को नहीं दिया। इसलिए विवाह के पूर्व श्रीदेवी को देखकर आयेंगे।''

अच्छा मुहूर्त देखकर तीनों रामापुर गये। अकस्मात् आये विष्णुस्वामी और उसके परिवार को देखकर रामशास्त्री और उसकी पत्नी पहले चकित तो हुए पर, उनके आगमन के अंतरार्थ को जानकर हताश हो गये।

थोड़ी देर बाद रामशास्त्री ने दर्द-भरे स्वर में कहा, ''विष्णुस्वामी, हमने सपने में भी नहीं सोचा था कि बहुत पहले दिये गये वचन को याद रखकर आप लोग यहाँ आयेंगे। मुझे दुख है कि मैं आपकी अच्छाई का फ़ायदा उठा नहीं सकूँगा। श्रीदेवी हमारे साथ होती तो आप लोगों के पांव धोकर कन्यादान कर देता।''

यह सुनते ही विष्णुस्वामी ने आतुरता-भरे स्वर में पूछा, ''श्रीदेवी कहाँ है? कहाँ चली गयी?''

रामशास्त्री ने कहा, ''आपके यहाँ चले जाने

के ठीक एक महीने के बाद निस्संतान एक पंडित, संतान के लिए पूजा और प्रार्थना करने रंगनाथ स्वामी के दर्शनार्थ पत्नी समेत यहाँ आया। वे गर्मी के दिन थे। पंडित और उसकी पत्नी मंदिर से लौट रहे थे। गर्मी सह न सकने के कारण विश्राम करने वे मेरे घर के नीम के पेड़ के नीचे बैठ गये। उनकी बुरी हालत को देखते हुए हमने उन्हें घर के अंदर आने का निमंत्रण दिया। इतने में पंडित की पत्नी हांफती हुई बेहोश हो गयी।

पत्नी और श्रीदेवी की सहायता से हम उसे अंदर ले आये। इसके बाद गाँव के बड़े वैद्य से उसकी चिकित्सा करवायी। सप्ताह भर यह चिकित्सा होती रही। श्रीदेवी ने उस दौरान

यथासाध्य उस पंडित की पत्नी की सेवा-शुश्रूषा की। तब जाकर पंडित की पत्नी स्वस्थ हुई। फिर धीरे-धीरे दोनों परिवारों ने एक-दूसरे के बारे में जाना।

''यह तो ठीक है। पर तुमने यह नहीं बताया कि श्रीदेवी का क्या हुआ।'' विष्णुस्वामी ने पूछा।

''वही कहने जा रहा हूँ। उस पंडित ने श्रीदेवी को बड़े प्यार से अपने पास बिठाया और उसके सिर पर हाथ फेरते हुए कहने लगा, ''मुझे लगता है, उस रंगनाथ स्वामी ने हमपर कृपा की। सर्वगुण संपन्न छः साल की उम्र की एक पुत्री को हमें प्रसाद के रूप में दिया। इस नन्हीं बच्ची को हम गोद लेंगे। क्या इसमें आपको कोई आपत्ति है?'' उस समय उस पंडित की आँखों में आंसू उमड़-उमड़कर आ रहे थे। हमने सोचा कि इससे श्रीदेवी का जीवन संवरेगा, इसलिए दिल पर पत्थर रखकर उनके प्रस्ताव को मान लिया।''

''श्रीदेवी को गोद लेनेवाले वे पंडित कौन हैं?'' विष्णुस्वामी और माधव एक साथ पूछ बैठे। रामशास्त्री ने इस जवाब में कहा, ''उनका नाम रामशर्मा है। श्रीदेवी को गोद लेने के बाद उन्हें राजा का आदर प्राप्त हुआ। गोद लेते समय उन्होंने अपनी अभिरुचि के अनुकूल उसका नाम रखा, लक्ष्मी शारदा।''

रामशास्त्री की बातों से विष्णुस्वामी, उसकी पत्नी, पुत्र कितने खुश हुए, यह वर्णनातीत है। विष्णुस्वामी से पूरा विवरण जानने के पश्चात रामशास्त्री का परिवार भी आनंद-विभोर हो गया।

इस घटना के दो महीनों के बाद नूतन दंपति शारदा और माधव को आशीर्वाद देते हुए रामशर्मा ने विष्णुस्वामी से कहा, ''देखा समधीजी, अच्छे दिल से मानव द्वारा किये जानेवाले कामों की कितनी महिमा है। वह रंगनाथ आप लोगों को फिर से रामापुर ले गया और यह चमत्कार किया। इससे महालक्ष्मी की इच्छा भी पूरी हुई और माधव का जीवन आशय भी पूरा हुआ। यही है, अच्छाई की महिमा।''

माया सरोवर

20

(सिद्धसाधक को जब पता चला कि जयशील को माया सरोवरेश्वर अपने साथ ले जा रहा है; तब वह भी रवाना होने को हुआ। तभी उसे जलवृक राक्षसों का समाचार मिला। इस पर राजा कनकाक्ष तथा सिद्धसाधक चल पड़े; उन्हें जलवृक राक्षसों के साथ संघर्ष करनेवाले देवशर्मा तथा अन्य लोग दिखाई दिये। इसके बाद...)

नर भक्षी लोग अपनी भूख मिटाने के लिए जलवृक राक्षसों में से कुछ लोगों को पकड़ने की आशा में उनके पीछे दौड़ रहे थे। पर उन लोगों ने इस बात पर ध्यान न दिया कि राक्षस उन्हें किस दिशा में ले जा रहे हैं। उस वक़्त दो जलवृक राक्षस एक घने वृक्ष की डालों में छिपकर यह दृश्य देख रहे थे। वे लोग अपने राजा के आदेश पर सबेरे से उस प्रदेश में अपने शत्रुओं का पता लगाने के वास्ते पहरा दे रहे थे।

पेड़ पर स्थित जलवृक राक्षसों में से एक अपने साथी से बोला, "अबे, सुनो ! हमारे राजा को दुश्मन की ताक़त का कुछ पता नहीं है। इसके पहले सरोवर में हुई लड़ाई में हमने माया सरोवर के राजा के सेवकों को मार भगाया, लेकिन अब उनकी सहायता के लिए थोड़े लोग और आगे आ रहे हैं। बताओ, अब क्या किया जाये?"

दूसरे जलवृक का ध्यान और कहीं था। उसकी दृष्टि माया सरोवर की ओर भागनेवाले अपनी

जाति के लोगों तथा उनका पीछा करनेवाले नर भक्षकों पर केंद्रित थी। उन लोगों से थोड़ी दूर बैसाखी के सहारे लंगड़ाते चलनेवाले हिरण्यपुर के सेनापति के पुत्र मंगलवर्मा को भी वह अत्यंत विस्मय के साथ देखने लगा। एक जलवृक ने अपने साथी को मंगलवर्मा की ओर इशारा करके कहा, ''अबे, सुनो ! इसे ले जाकर हम अगर अपने राजा के सामने हाज़िर कर दें तो कैसा होगा? इसके जरिये हम इस बात का पता लगा सकते हैं कि अभी-अभी जंगल में जो राजा आये हैं, उनके साथ कितनी सेना है?''

''सो तो ठीक है ! मगर दो दलों में बंटकर माया सरोवर की ओर बढ़नेवाले दुश्मन की बात क्या होगी? उनकी गतिविधि का पता लगाकर हमारे राजा को पहले ही सावधान नहीं करना है?'' दूसरे जलवृक ने कहा।

''यह काम तुम देख लो ! वे लोग माया सरोवर की ओर जा रहे हैं। इसमें कोई अज्ञात रहस्य भी तो नहीं है। मैं इस लंगड़े को अपने कंधे पर उठाकर हमारे राजा के हाथ सौंप दूँगा।'' यों कहकर पहला जलवृक पेड़ पर से उतर पड़ा और मंगलवर्मा के पीछे चलने लगा।

मंगलवर्मा अपने ऊपर होनेवाले ख़तरे को भांपने की स्थिति में न था, पैदल चल सकनेवाले लोग तथा घुड़ सवार भी जल्दबाजी में उसकी बात भूलकर माया सरोवर की ओर जा रहे थे। इसलिए वह तेजी के साथ चल न सकने के कारण पीछे रह गया था। जल्दी सरोवर तक पहुँचकर उसे भी जलवृक राक्षसों के साथ होनेवाली लड़ाई में भाग लेना था, क्योंकि वह समझता था कि वीरता का निर्णय पैर और तलवार नहीं, बल्कि साहस करता है।

मंगलवर्मा यों सोचते आगे बढ़ा चला जा रहा था, तभी पीछे कोई आहट हुई। उसने सर घुमाकर पीछे की ओर देखा। जलवृक राक्षस जल्दबाजी में आकर उसे पकड़ने को हुआ, पर उसका पैर फिसल कर एक दरार में फंस गया जिससे उसका पत्थरवाला गदा हाथ से छूटकर दूर जा गिरा। उसने पैर बाहर निकालने की पूरी कोशिश की, किंतु इससे उसके पैर में मोच आ गई।

जलवृक राक्षस पीड़ा के मारे जोर से चिल्ला उठा, ''हे जलवृक नाथ ! तुम्हीं बचाओ।''

मंगलवर्मा समझ गया कि वह ख़तरे से बाल-

बाल बच गया। तब वह जलवृक के निकट जाकर ऊँचे स्वर में बोला, ''अबे, तुमने मुझे पकड़ने के लिए अपना पैर नाहक़ तुड़वा लिया। तुम्हें सही सबक़ मिल गया है। बस, इस वक़्त तुम्हें इलाज की ज़रूरत है। कहीं रहनेवाला तुम्हारा राजा जलवृक नाथ तुम्हारी कोई मदद न कर पायेगा। इसके पूर्व ही तुम्हारे जल राक्षसों ने सरोवरेश्वर के महल पर हमला कर दिया था न? उसमें कौन जीता? तुम सच बताओगे तो संजीवनी जैसी जड़ी-बूटियों से तुम्हारे टूटे पैर में पट्टी बांधकर तुम्हें चलने लायक़ बना दूँगा।''

ये शब्द सुनकर जलवृक जवाब देने को था, तभी पेड़ की डालों में छिपे जलवृक का साथी अपना गदा उठाकर चिल्ला उठा, ''अरे माया सरोवरेश्वर के सेवक ! मैं तुम्हें इसी क्षण इस दुनिया से विदा कर दूँगा।''

मंगलवर्मा ने ख़तरा भांपकर अपनी बैसाखीवाली लाठी की मूठ को ऊपर खींचा। पल भर में चकाचौंध करनेवाली पैनी तलवार बाहर निकल आई। उसने पैर तुड़वाये जलवृक राक्षस के कंठ पर तलवार की नोक टिकायी, और अपनी ओर बढ़नेवाले दूसरे जलवृक राक्षस से कहा, ''अरे दुष्ट ! सुनो, मैं एक से तीन तक की गिनती करूँगा, तब तक तुम अपने गदे को दूर फेंककर घुटनों के बल पर रेंगते मेरे समीप आ जाओ। ऐसा नहीं करोगे तो इसी वक़्त तुम्हारे दोस्त की गर्दन धरती पर लोट जाएगी, इसके बाद तुम्हारी बारी आएगी ! सुनो, एक, दो...।''

मंगलवर्मा के मुँह से तीन निकलने के पूर्व ही जलवृक ने गदा दूर फेंक दिया और घुटनों पर बैठकर काँपते हुए बोला, ''मैं तुम्हारी अधीनता को स्वीकार करता हूँ। मेरे दोस्त को मत मारो।''

''अबे कमबख़्त जल भेड़िये। तुम्हारी मित्रता का धर्म प्रशंसनीय है ! मेरे साथ चलो, तुम्हें औषधि के पत्र दिखा देता हूँ।'' ये शब्द कहकर मंगलवर्मा निकट की झाड़ियों की ओर बढ़ा।

मंगलवर्मा ने बड़ी सावधानी से जांच करके थोड़े से पके पत्ते और कुछ कोंपलें तोड़कर उन्हें हथेली पर मर्दन किया और एक ढेला सा बनाकर जलवृक के हाथ देकर बोला, ''सुनो ! यह औषधि तुम अपने दोस्त के घुटने पर लगाकर पट्टी बांध दो। उसे कम से कम बारह घंटों तक उस जगह से हिलना नहीं चाहिए। तभी यह दवा काम करेगी।''

मंगलवर्मा यह सोचते आगे बढ़ा कि ये दोनों जलवृक जंगल में किसी ख़ास काम पर लगे हुए हैं और वे सच बताने की हालत में नहीं हैं। मंगलवर्मा ने इसके पूर्व माया सरोवर में अपना थोड़ा समय बिताया था। इसलिए वह माया सरोवर तक पहुँचने का निकटवाला रास्ता जानता था। मगर बैसाखी के बल पर ऊबड़-खाबड़ रास्ते पर चलना उसके लिए कठिन था।

मंगलवर्मा यों लंगड़ाते चार-पाँच मिनट तक चल पाया था, तभी एक ऊँचे वृक्ष पर से किसी ने उसे पुकारा, ''मंगलवर्मा !''

मंगलवर्मा ने सोचा कि यह किसी वृक्ष-पिशाच की पुकार होगी। उसने सर उठाकर देखा। एक विशाल वृक्ष की डालों पर फैली जंगली लताओं में फंसा हुआ कोई व्यक्ति उसे दिखाई दिया। वह और कोई न था; माया सरोवरेश्वर के हंसोंवाले रथ का सारथी था। रथ जब उलट गया, तब वह उसमें से खिसककर पेड़ पर फैली लताओं में फंस गया और मरते-मरते बच गया।

''ओह ! तुम बच गये ! बड़ी ख़ुशी की बात है ! नीचे आने के लिए क्या तुम्हें किसी डाल का सहारा नहीं मिला?'' मंगलवर्मा ने पूछा।

हंसों के रथ का सारथी स्वीकृति सूचक सर हिलाकर बोला, ''वर्मा, धीरे से बोलो, यम दूत जैसा एक व्यक्ति भयंकर नर वानर पर सवार हो इसी रास्ते पर आ रहा है। मैं समझता हूँ कि ये लोग हमारे दुश्मन जयशील और सिद्धसाधक होंगे।''

ये बातें सुनने पर मंगलवर्मा का उत्साह उमड़ पड़ा। उसने सोचा कि उस दल में वैद्यदेव देवशर्मा भी होंगे। इसलिए उनके साथ जल्द ही वह माया सरोवर तक पहुँच सकता है।

''इस वक़्त ये लोग हमारे दुश्मन नहीं। मगर मैं यह बात ठीक से नहीं जानता कि ये हमारे मित्र हैं या नहीं। उन लोगों में हमारे हितैषी वैद्यदेव भी हैं। मैं तो लंगड़ा ठहरा। पेड़ पर चढ़ नहीं सकता। तुम उतर नहीं सकते। इसलिए तालियाँ बजाकर उन लोगों को यहाँ पर बुलाओ।'' मंगलवर्मा ने सुझाया।

रथ सारथी को जब पता चला कि नर वानर पर सवार हुए व्यक्ति के साथ वैद्यदेव भी हैं, तब उसकी जान में जान आ गई। यदि वह थोड़े समय तक इसी प्रकार पेड़ की डालों में फंसा रहे तो कोई नर भक्षी या जलवृक राक्षस उसका अंत कर देगा।

यों विचार करके रथ सारथी ने थोड़ी दूर पर जानेवाले सिद्धसाधक, राजा कनकाक्ष तथा उसके अनुचरों को लक्ष्य करके ऊँचे स्वर में पुकारा, "महाशयो ! मुझे बचाइये ! मैं पेड़ की डाल पर लताओं में फंस गया हूँ।"

उस पुकार को सबसे पहले अपने तेज कानों से नर वानर ने सुन लिया। फिर क्या था, अचानक वह रुक गया, सर उठाकर ऊपर देखते हुए अपने कंधे पर बैठे सिद्धसाधक को इशारा किया। इस बीच रथ सारथी एक और बार चिल्ला उठा।

इस बार सब लोगों ने उसकी पुकार को स्पष्ट सुन लिया। देवशर्मा ने कहा, "यह पुकार माया सरोवरेश्वर के रथ सारथी की लगती है। वह हंसोंवाले रथ से इसी प्रदेश में गिर गया था।"

"वाह ! मैं उसे पकड़ लूँगा। उसके मालिक के सभी रहस्यों का पता उसी से लगा लूँगा। जयशील के दिखाई देने पर इन सबको पेड़ों से बांधकर महाकाल की बलि चढ़ाऊँगा।" यों कहते सिद्धसाधक ने नर वानर को हांक दिया।

नर वानर तेजी से दौड़ पड़ा और रथ सारथीवाले पेड़ के नीचे रुका। इस पर मंगलवर्मा ने कहा, "सिद्धसाधक ! पेड़ की डालों में फंसे हमारे साथी को जैसे भी हो नीचे उतारना होगा !"

सिद्धसाधक चिल्ला उठा, "जय महाकाल की !" फिर बोला, "यह सब मुझे आश्चर्य जनक मालूम होता है। माया सरोवरेश्वर न केवल राजा कनकाक्ष के बच्चों का अपहरण करके ले गया, बल्कि अब मेरे मित्र जयशील को भी ले गया है। लेकिन आप लोग ऐसी बातें कर रहे हैं जैसे वह हमारा शत्रु नहीं बल्कि मित्र है।"

देवशर्मा ने सिद्धसाधक को शांत करते हुए कहा, "सिद्धसाधक ! इस वक़्त हमारे लिए तथा माया सरोवरेश्वर के लिए भी ख़तरनाक दुश्मन सरोवर में एक और स्थान पर निवास करनेवाले जलवृक राक्षस हैं? हम सब मिलकर उनका सर्वनाश नहीं करेंगे, तो हम राजा कनकाक्ष के बच्चों को बचा न पायेंगे। अब मेरा अनुमान है कि इस वक़्त सरोवर जलवृक राक्षसों के अधीन है।" इस बीच राजा कनकाक्ष भी अपने सैनिकों के साथ वहाँ पर आ पहुँचे।

"महाशयो, मुझे बचाइये ! एक बहुत ही बड़ा अजगर डालों पर रेंगते हुए मुझे निगलने के लिए मेरी तरफ़ बढ़ा चला आ रहा है।" इन शब्दों के साथ रथ सारथी डर के मारे चिल्ला उठा।

दूसरे ही क्षण सिद्धसाधक ने नर वानर को अपने हाथ का इशारा करके आदेश दिया, "हे नर वानर ! उस पेड़ की डालों में जंगली लताओं में फंसे हुए व्यक्ति को नीचे ले जाओ।"

तत्काल नर वानर बिजली की गति के साथ ऊँची डालों पर पहुँचा, एक हाथ से रथ सारथी के निकट पहुँचनेवाले अजगर को कसकर पकड़ लिया और दूसरे हाथ से रथ सारथी को जंगली लताओं से बाहर खींच डाला। रथ सारथी नर वानर को देख काँप उठा और एक मजबूत डाल पकड़कर बोला, "अब मैं नीचे उतर सकता हूँ।"

इसी वक़्त हठात् जलवृक राक्षसों का एक दल पत्थर के गदे उठाये आ पहुँचा और "जलवृक नाथ की जय !" चिल्लाते उन पर टूट पड़ा।

जलवृक राक्षसों में एक व्यक्ति गैंडे पर सवार था। वह तेजी के साथ गदा हिलाते चेतावनी देने लगा, "सुनो, हमारे दुश्मनों में से एक भी जीवित भाग न पाये।"

पेड़ की डालों पर से नर वानर ने यह दृश्य देखा। वह घोर गर्जन करता हुआ जिससे सारा जंगल गूँज उठा, अपने हाथ के अजगर को चाबुक की भांति झाड़कर ऊपर से गैंडे पर सवार जलवृक राक्षस पर कूद पड़ा।

(अगले अंक में समाप्त)

साहसी

धुन का पक्का विक्रमार्क फिर से पेड़ के पास गया। उसने पेड़ से शव को उतारा और अपने कंधे पर डाल लिया। फिर यथावत् मौन धारण किये श्मशान की ओर अग्रसर होने लगा। तब शव के अंदर के वेताल ने कहा, ''इस भयंकर श्मशान में निधड़क ऐसे चले जा रहे हो मानों कोई भी तुम्हारा कुछ बिगाड़ नहीं सकता। मैं तुम्हारे साहस की दाद देता हूँ। पर कम से कम यह तो बताओ कि आख़िर तुम्हारा लक्ष्य क्या है? क्या किसी की सहायता के लिए अपनी जान को जोख़िम में डाल रहे हो? कहीं ऐसा न हो कि तुम किसी का काम पूरा करो और वह अपने वचन से मुकर जाए। तुम सावधानी बरतो, इसीलिए मैं तुम्हें

महेन्द्रगिरि की राजकुमारी की कहानी सुना रहा हूँ। ध्यान से सुनो,'' फिर वेताल कहानी यों सुनाने लगा :

बहुत पहले की बात है। मधुसूदन नामक राजा महेंद्रगिरि का शासक था। माधवी उसकी इकलौती बेटी थी। वह साहसियों को बहुत पसंद करती थी। वह कहा करती थी कि कोई युवक, चाहे वह ग़रीब और अनपढ़ भी क्यों न हो, साहसपूर्ण कार्य करे तो उससे वह शादी करेगी।

राज्य भर में यह बात फैल गयी। माधवी से शादी करने के लिए कितने ही युवक आगे आये और सबने साहसपूर्ण काम करके दिखाया। एक युवक ऊँचे पर्वत के शिखर पर चढ़ गया और वहाँ से कूदकर सुरक्षित ज़मीन पर आ गया। एक और युवक भयंकर तूफ़ान में नाव पर समुद्र के बीचोबीच गया और वहाँ से तैरते हुए किनारे पर आ गया। एक और युवक खाली हाथ जंगल में गया, वहाँ उसने एक रीछ को अपने वश में कर और उसी पर सवार हो नगर में प्रवेश किया।

यों अनेक साहसी युवकों ने तरह-तरह के करतब दिखाये और अपना साहस साबित किया। परंतु राजकुमारी ने उनसे कहा, ''तुम लोगों का साहस अवश्य ही प्रशंसनीय है, किन्तु इससे किसी दूसरे को कोई लाभ नहीं पहुँचा।'' यों कहकर उसने उन्हें सोने की अशर्फ़ियाँ भेंट स्वरूप दीं और वापस भेज दिया।

ऐसे समय पर महेंद्रगिरि की सरहदों पर एक राक्षस ने प्रवेश किया। वह बड़ी-बड़ी जटाओंवाले बरगद के एक पेड़ के नीचे रहने लगा। उस तरफ़ से गुज़रते हुए शिव और शंकर नामक दो दोस्तों को उसने पकड़ लिया। राक्षस ने उनसे कहा, ''मैं राक्षस हूँ, पर शाकाहारी हूँ। तुम दोनों में से एक को अपने साथ रखूँगा। दूसरा नगर में जायेगा और मुझे जितना आहार चाहिए, ले आयेगा। इसके लिए मैं तुम्हें एक दिन का समय देता हूँ। एक दिन के अंदर मुझे आहार नहीं मिलेगा तो अपनी भूख मिटाने के लिए जो मेरे साथ है, उसे खा जाने में कोई आनाकानी नहीं करूँगा।''

शंकर राक्षस के साथ रह गया और शिव राक्षस के लिए आहार ले आने के लिए आसपास के गाँव में गया। उसने वहाँ के लोगों को वास्तविक स्थिति बतायी और गाड़ी भर की आहार-सामग्री लादे राक्षस के पास आया।

इस पर राक्षस बहुत प्रसन्न हुआ और शंकर को मुक्त करते हुए कहा, ''अपने राजा से बताना कि मैं यहाँ रह रहा हूँ। उससे यह भी कहना कि वह हर दिन मुझे इतनी बड़ी मात्रा में आहार भेजता

रहे। जिस दिन मुझे आहार नहीं मिलेगा, उस दिन उसके राज्य पर आक्रमण कर उसका सर्वनाश कर दूँगा।''

यह समाचार राजा को पहुँचाया गया। उसने सेना सहित उस राक्षस पर हमला बोल देना चाहा, पर माधवी ने अपने पिता को ऐसा करने से रोकते हुए कहा, ''राक्षस का शाकाहारी होना बड़ी ही विचित्र बात है। इस राक्षस का रहस्य जानने के लिए साहस की ज़रूरत है। आप घोषित कर दीजिए कि यह साहसियों के लिए एक परीक्षा है। इस बीच राक्षस की माँग के अनुसार आहार-सामग्री भेजते रहिये।''

राजा मधुसूदन ने, बेटी के कहे अनुसार घोषणा कर दी। घोषणा को सुनने के बाद कुछ साहसी युवकों ने राक्षस से बात की। राक्षस ने उनके प्रश्नों के उत्तर में कहा, ''मैं देवता हूँ, पर शाप के कारण राक्षस बन गया हूँ। मुझे शाप से मुक्त करना साधारण मानवों के बस की बात नहीं है। महेंद्रगिरि के उत्तर में जो पर्वत हैं, उनमें एक उजड़ा विष्णु मंदिर है। उस मंदिर में एक सुरंग मार्ग भी है। उस सुरंग मार्ग में विषैले सर्प, बिच्छु-जोंक आदि भरे पड़े हैं। उसे पार करके आगे जाना संभव हुआ तो वहाँ एक अग्निकुंड है। उसमें कूदने पर सीधे पाताल पहुँचते हैं। वहाँ एक बहुत बड़ा अजगर है। मानव को देखते ही वह उसे निगल जाता है। उसके पेट में एक अंगूठी है। उस अंगूठी को लाकर मेरे अंगूठे में पहनाने पर मैं शाप मुक्त हो जाऊँगा।''

उसकी यह कहानी सुनते ही कुछ साहसी तो दुम दबाकर भाग गये। कुछ युवक विष्णु मंदिर

की सुरंग तक गये और लौट आये। एक ने सुरंग में प्रवेश किया, पर विषैले सर्पों के फुफकारों को सुनकर दौड़ा-दौड़ा वापस चला आया। एक साहस करके सुरंग के अंदर गया। पर कुछ ही क्षणों में उसका आर्तनाद सुनायी पड़ा।

सत्यवान नामक एक युवक उसी राज्य के एक गाँव का निवासी था। वह बहुत ही ग़रीब था। उसने समस्त शास्त्र पढ़ तो लिये, पर उसमें साहस का अभाव था।

एक दिन अकस्मात् सत्यवान का परिचय जयद्रध नामक युवक से हुआ। सच तो यह है कि जयद्रध ही सत्यवान को ढूँढ़ते हुए वहाँ आया।

जयद्रध राजवंशज था। उसे मालूम था कि माधवी से विवाह रचाने के लिए साहसपूर्ण कार्य करने की शक्ति उसमें नहीं है, इसलिए उसने मांत्रिक शक्तियों का सहारा लेने का निश्चय किया। वह एक सुप्रसिद्ध सिद्धयोगी से मिला।

जयद्रध की इच्छा सुनने के बाद सिद्धयोगी ने कहा, ''मेरे पास एक तावीज़ है। उसे हाथ में पहनने पर तीन विपत्तियों से आसानी से बच सकते हैं। पर, यह तावीज़ सबके लिए उपयोगी साबित नहीं होगा। हाथ में पहनते ही उसका रंग हरे रंग में परिवर्तित हो जाए तो वह तुम्हारे उपयोग में आयेगा।'' कहते हुए सिद्धयोगी ने काले रंग का एक तावीज़ उसके हाथ में बाँधा, पर उसके रंग में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। यह देख कर जयद्रध निराश हो गया।

सिद्धयोगी ने उसके कंधे को थपथपाते हुए कहा, ''इस भूमि पर हर समस्या का समाधान है। इस तावीज़ को पहनकर महेंद्रगिरि राज्य भर में तुम घूमते रहना। जिस युवक की उपस्थिति में इस तावीज़ का रंग नील में परिवर्तित हो जाये तो उसके हाथ में इसे बाँधो। तब अगर वह हरे रंग में परिवर्तित हो गाए तो राक्षस की पीड़ा से मुक्त होने के लिए उस व्यक्ति को उपयोग में लाओ। यह सब कुछ जब फलदायक साबित होगा, तब तुम्हीं निर्णय लो कि कैसे इसका फ़ायदा उठाया जा सकता है।''

सत्यवान की उपस्थिति में जयद्रध के हाथ में बंधे हुए तावीज़ का रंग नीला हो गया। फिर उसने तुरंत यह सारा वृत्तांत सत्यवान को बताया।

यह सुनकर सत्यवान घबरा गया और कहा, ''अच्छा, यह बात है ! पर मैं साँप से, आग से, अजगर से डरता हूँ। उनके नाम सुनते ही मेरा शरीर भय के मारे काँपने लगता है। मैं एकदम कायर हूँ। ऐसे काम मैं नहीं कर सकता।''

जयद्रध ने हँसते हुए कहा, ''ठीक है, पर पहले इस तावीज़ को तुम्हारे हाथ में बाँधने तो दो। वह हरे रंग में बदल जाए तो तुम्हीं से ये कठिन कार्य पूरे होंगे।''

जैसे ही जयद्रध ने, सत्यवान के हाथ में तावीज़ बांधा, वह हरे रंग में परिवर्तित हो गया। यह देखते हुए सत्यवान आश्चर्य में डूब गया।

अब जयद्रध ने, सत्यवान को मनाने के लिए चारों साम दामभेद दंडोपायों का उपयोग किया। उसने कहा, ''महेंद्रगिरि राज्य का भविष्य तुम पर ही निर्भर है। अगर यह काम तुम करोगे तो जीवन भर के लिए पर्याप्त धन-राशि तुम्हें दूँगा। अगर तुमने ऐसा करने से इनकार कर दिया तो राजा से शिकायत करूँगा और तुम्हें कड़ी सज़ा दिलावाऊँगा।'' यह कहते हुए उसने पोशाक में छिपायी छुरी भी निकाली।

तावीज़ पहनते ही सत्यवान में साहस भर आया। जयद्रध के साथ वह सुरंग तक गया और उसमें प्रवेश किया। सर्पों ने उसका कुछ

नहीं बिगाड़ा। अग्निकुण्ड उसे शीतल लगा। अजगर उसे पत्थर की मूर्ति लगा। वह उसके पेट में चला गया और अंगूठी ले ली। फिर पता नहीं, क्या हो गया, वह वहाँ से अकस्मात् ग़ायब हो गया और सुरंग के बाहर खड़े जयद्रथ के सामने प्रत्यक्ष हुआ।

अंगूठी देखकर जयद्रथ बेहद खुश हुआ। उसने सत्यवान से राक्षस के पास चलने के लिए बुलाया। सत्यवान ने राक्षस का नाम लेते ही काँपते हुए कहा, ''तीन विपत्तियों से बच पाया। अब तो तावीज़ की महिमा समाप्त हो गयी, इसलिए राक्षस के पास आने से मुझे ड़र लगता है।''

जयद्रथ इस असहाय स्थिति में माधवी से मिला और उसे अंगूठी देते हुए कहा, ''आप इसे राक्षस को सौंपेंगी तो वह शाप-मुक्त हो जायेगा और वह हमारे राज्य को छोड़कर चला जायेगा।''

उस अंगूठी को देखकर माधवी चकित रह गयी। फिर वह जयद्रथ और अपने पिता को साथ लेकर राक्षस से मिलने गयी। राक्षस ने जैसे ही अंगूठी अपनी उँगली में पहन ली, वह दिव्य पुरुष के रूप में बदल गया। उसने माधवी से कहा, ''अब तुम्हारे विवाह का विषय मुख्य है। जो तुम्हारा पति बनेगा, उसे एक और साहसपूर्ण काम करना होगा। यहाँ से एक कोस की दूरी पर एक गहरा कुआँ है। उस कुएँ में रत्न जटित कंकण है। जो उस कंकण को तुम्हारे सुपुर्द करेगा, वही तुम्हारा पति होने लायक़ है। पर एक बात है। उस गहरे कुएँ में तीन भूत हैं। मेरा विश्वास है कि उनका सामना करने की शक्ति

किसी मानव में नहीं है। उनका सामना किये बिना रत्नजटित कंकण को ले आना असंभव है।'' कहकर वह अदृश्य हो गया।

दिव्य पुरुष की बातों पर आश्चर्य प्रकट करते हुए माधवी ने कहा, ''जयद्रथ, असंभव कार्य को तुमने संभव कर दिखाया। रत्न कंकण भी ले आने में तुम सफल हो जाओगे तो मैं तुमसे विवाह करूँगी।''

जयद्रथ को माधवी की बातों ने हिला दिया। पर वह कुछ कहे बिना माधवी की अनुमति लेकर वहाँ से चला गया। फिर वह सत्यवान से मिला और रत्न-जटित कंकण का किस्सा सुनाया। उससे विनती की कि इस काम में भी वह उसकी सहायता करे।

सत्यवान ने थरथर काँपते हुए कहा, ''क्या, तुमने मालूम किया उस गहरे कुएँ में कंकण के अलावा और क्या-क्या हैं?''

''हाँ, वहाँ रत्न कंकण मात्र ही है,'' जयद्रथ ने विश्वास-भरे स्वर में कहा।

''पर मैं यह विश्वास नहीं करता। अगर उसमें केवल रत्न कंकण ही है तो तुम खुद उसे ला सकते हो।'' सत्यवान ने कहा। उसे विश्वास दिलाने के लिए जयद्रध ने कहा, ''राक्षस ने बताया कि जो अंगूठी ले आने में सफल हुआ है, वही यह रत्न कंकण भी ले आ सकता है। इसीलिए मैं तुम्हारे पास आया।''

जयद्रध की बातों का विश्वास करके सत्यवान उसके साथ गहरे कुएँ के पास गया। उसमें वह उतरा। उसे वहाँ किसी भी भूत का सामना करना नहीं पड़ा। कुएँ के बिलकुल नीचे चमकता हुआ वह कंकण उसे दिखायी पड़ा। उसे लेकर सत्यवान निष्कंटक बाहर आ गया।

रत्न कंकण को देखकर जयद्रध खुशी से फूल उठा और बोला, ''शाबाश, सत्यवान, शाबाश! मेरे कहे अनुसार करके तुमने असंभव को भी संभव बना दिया। मैंने सोचा था कि उस शिथिल बिष्णु मंदिर से तुम बाहर नहीं आ पाओगे, पर तुम सही सलामत बाहर आ गये। मैंने सोचा था कि इस गहरे कुएँ से भी तुम बाहर नहीं आ पाओगे, क्योंकि वहाँ के भूत तुम्हें निगल जायेंगे, पर इसमें भी तुमने सफलता हासिल की। तुमने धैर्य के साथ सभी ख़तरों का सामना किया और बच निकल आये। तुम सचमुच ही महान साहसी हो।''

जयद्रध अपनी बात पूरी करे, इसके पहले ही राजकुमारी माधवी, राजा मधुसूदन और कुछ सैनिक वहाँ आ पहुँचे।

क्रोध भरे नेत्रों से जयद्रध को देखते हुए माधवी ने कहा, ''जयद्रध, दिव्य पुरुष ने जब एक और साहसपूर्ण कार्य करने के लिए तुम्हें आदेश दिया, तब मुझे लगा कि तुम धोखेबाज़ हो। तुमने सोच रखा कि तुम्हारी बातें सुननेवाला अग़ल-बग़ल में कोई नहीं है, तो तुमने सच उगल डाला। अब तुम्हारी बातों से स्पष्ट है कि मेरी शंका सच है।''

माधवी की बातों से जयद्रध एकदम घबरा गया और कहने लगा, ''राजकुमारी, मैं न होता तो क्या सत्यवान ये साहसपूर्ण कार्य कर पाता? कदापि नहीं। मैंने राज्य की भलाई की, राक्षस के हाथों से बचाया, अतः आपसे शादी करने का हक़ केवल मुझे है।''

माधवी ने जयद्रध की भर्त्सना करते हुए कहा, ''मैंने धैर्यवान व साहसी से ही शादी करने की घोषणा की। उससे नहीं, जिसका लक्ष्य केवल राज्य की भलाई करनी है। सत्यवान सच्चा साहसी है।''

यह सुनते ही सत्यवान ने कहा, "मुझे क्षमा कर दीजिए, राजकुमारी। जैसा आप समझती हैं, मैं ऐसा कोई साहसी नहीं हूँ।"

माधवी ने हँसते हुए कहा, "तुम नहीं जानते कि तुम कितने बड़े साहसी हो। तुम्हीं मुझसे शादी करने की योग्यता रखते हो।"

वेताल ने पूरी कहानी सुनाने के बाद कहा, "राजन्, जयद्रध ने अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए अपना पूरा बल लगाया। वह सिद्धयोगी के आश्रय में गया, तावीज़ प्राप्त किया, तद्धारा कायर सत्यवान के द्वारा अनेक अद्भुत वस्तुएँ पायीं और महेंद्रगिरि को राक्षस के आक्रमण से बचाया। पर आश्चर्य की बात तो यह है कि राजकुमारी ने ऐसे कार्यशूर से शादी करने से इनकार कर दिया। क्या वह अपने बचन से मुकर नहीं गयी? सत्यवान की बातों से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि वह साहसी नहीं बल्कि एकदम कायर है। अगर उसने कुछ साधा तो वह जयद्रध के द्वारा ही संभव हो पाया। अथवा वह कुछ नहीं कर पाता। ऐसे कायर से विवाह रचाना क्या राजकुमारी के लक्ष्य के विरुद्ध नहीं है? मेरे इन संदेहों के समाधान जानते हुए भी चुप रह जाओगे तो तुम्हारे सिर के टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे।"

विक्रमार्क ने कहा, "निर्भय होकर सत्य को स्वीकार करने से बढ़कर इस दुनिया में कोई और साहस नहीं। असली विषय को छिपाकर, जयद्रध ने उस कार्य का फल भोगना चाहा, जिसे उसने नहीं किया। सच कहा जाए तो झूठा जयद्रध ही कायर है। मानता हूँ कि सत्यवान में आत्मविश्वास का अभाव है, पर स्वभाव से वह कोई कायर नहीं। विश्वासपूर्वक धैर्य बांधा जाए तो कोई भी साहस करने के लिए वह सन्नद्ध है। उससे किये गये साहसपूर्ण कार्य इस सत्य के सबूत हैं। दोनों के बीच के इस भेद को राजकुमारी जान गयी, इसीलिए उसने कपटी जयद्रध को ठुकराकर सत्यवान से शादी करने की ठान ली। अतः तुम्हारा यह कहना ग़लत है कि वह बचन देकर मुकर गयी या अपने लक्ष्य के विरुद्ध उसने निर्णय लिया।"

राजा के मौन-भंग में सफल वेताल शव सहित ग़ायब हो गया और पुनः पेड़ पर जा बैठा।

(आधार सुमंगलि की रचना)

सारा गाँव देवभाषा बोलता है

राजस्थान के बंसवाडा जिले में गनोदा गाँव दस साल पहले तक भारत के किसी अन्य गाँव से बेहतर नहीं था। तब से आज तक उस गाँव में एक विलक्षण परिवर्तन आ गया है। गाँव के अधिकांश लोगों के लिए संस्कृत द्वितीय भाषा है। उनकी मातृ भाषा वागदी है। वहाँ तीन शैक्षणिक संस्थाएं हैं — एक प्राथमिक विद्यालय, एक उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, जहाँ संस्कृत की शिक्षा दी जाती है, तथा एक सरकारी संस्कृत महाविद्यालय। हजार से भी अधिक अध्यापक और छात्र संस्कृत को लोकप्रिय बनाने में लगे हुए हैं। घर पर तथा बाजार में लोग संस्कृत में बात करते है। घर की दीवारों पर संस्कृत में नारे लिखे जाते हैं, और अनेक घरों में संस्कृत के शब्द सिखाने के लिए संस्कृत में पोस्टर्स, अभिवादन के शब्द और वाक्य देखे जा सकते हैं। संस्कृत के श्लोकों का लोगों द्वारा मंत्रोच्चारण वहाँ का एक सामान्य दृश्य है।

कामदेव की पूजा

केरल में उत्तर मालाबार की कन्याएं मार्च-अप्रैल में हिन्दू पुराणशास्त्रों के काम के देवता कामदेव की मूर्तियाँ बनाकर उनकी पूजा करती हैं। यह वे दिव्य जननी भगवती माता के मंदिरों में नौदिवसीय पर्व के दौरान करती हैं। हिन्दू पुराणों में कहानी के अनुसार भगवान शिव ने उन्हें योग समाधि से ध्यान विचलित कर देने के कारण कामदेव को जलाकर भस्म कर दिया था। कामदेव की पत्नी रति ने अपने पति को पुनर्जीवित करने के लिए भगवान शिव से प्रार्थना की। भगवान शिव ने रति को कामदेव की फूलों से प्रतिमा बनाकर उसकी पूजा करने की सलाह दी। पूरम के नाम से लोकप्रिय यह पर्व रति द्वारा कामदेव के पूजन की स्मृति में मनाया जाता है।

भारत की पौराणिक कथाएँ - १७

आगन्तुक और फल

प्राचीन पावन नगरी बाराणसी के निकट सारनाथ में विशाल हरे-भरे उपवन के पास एक नया मठ बनाया गया था। सारनाथ के आसपास के ग्रामीणों को यह जानकर बहुत आश्चर्य हुआ कि इस मठ की जिन्होंने स्थापना की थी वे स्वयं कपिलवस्तु के राजकुमार थे जिन्हें उनके शिष्य अब बुद्ध के नाम से संबोधित करते थे।

बुद्ध और उनके शिष्य तपस्या का जीवन बिताते थे। प्रातः कालीन ध्यान सत्र के पश्चात कुछ शिष्य भिन्न-भिन्न दिशाओं में चले जाते थे। यदि एक शिष्य उत्तर की दिशा के गाँव में जाता तो दूसरा पश्चिमी दिशा के गाँव में। ये अपने को भिक्षु कहते थे। भिक्षु घर के सामने तब तक खड़ा रहता जब तक गृहस्थ उसे देख न ले। भिक्षु के हाथ में भिक्षा पात्र इस बात का संकेत होता कि वह भिक्षा की आशा करता है। सामान्य तौर पर गृहस्थ भिक्षापात्र में चावल या कोई अन्य खाद्य डाल देता। लेकिन यदि वह संकेत से मनाकर देता तो भिक्षु चुपचाप दूसरे द्वार की ओर चल पड़ता।

कभी-कभी ग्रामीण तथा पावन नगरी के नागरिक उत्सुकतावश मठ को देखने आते, जिसे मठवासी विहार कहते थे, और इसके गुरु, बुद्ध को देखकर चमत्कृत हो जाते थे। बुद्ध अपने शिष्यों
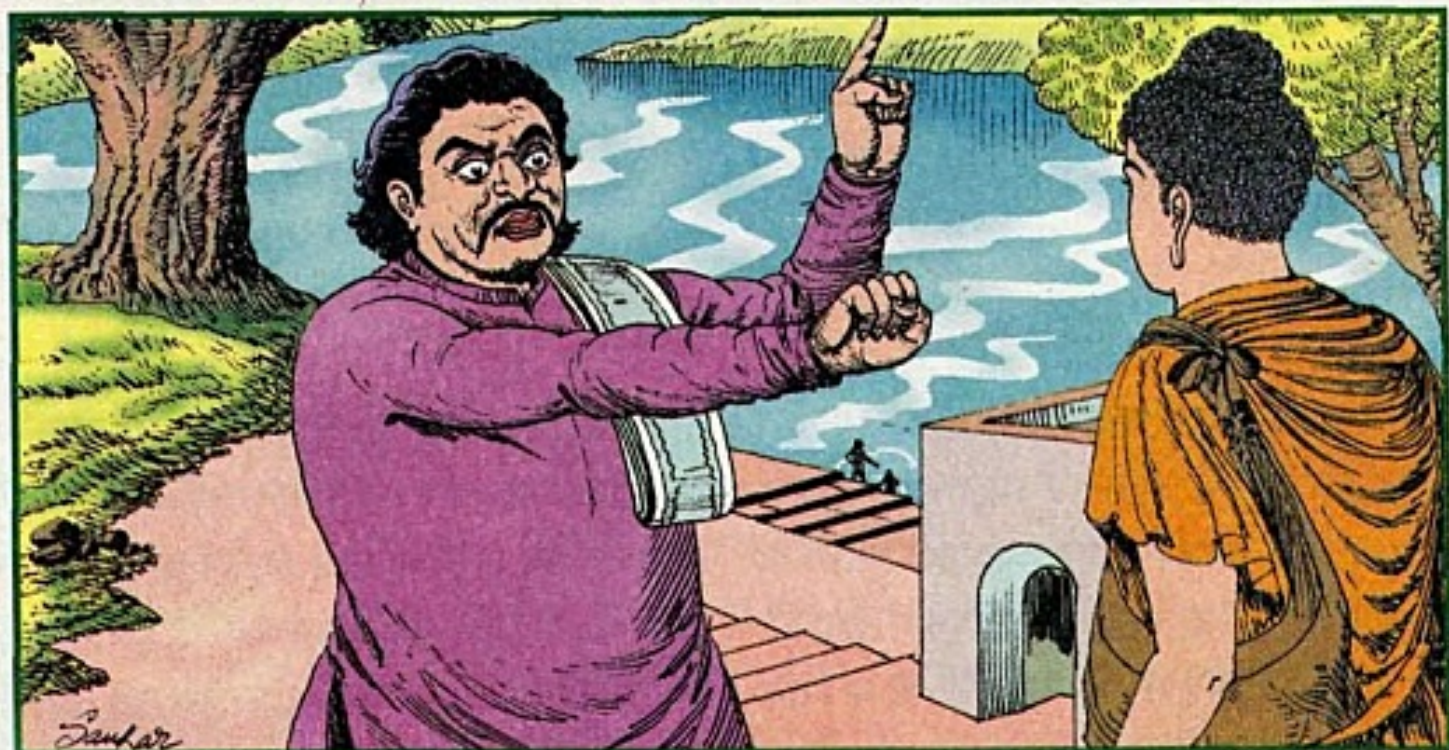
को अपना दर्शन समझाते थे और जिज्ञासुओं द्वारा पूछे गये प्रश्नों के उत्तर देते थे। वे इसे इतनी करुणा, प्रेम और शान्ति के साथ कहते कि दर्शक उनकी बात नहीं समझते तब भी उन्हें घण्टों मंत्रमुग्ध हो देखते रहते।

सारनाथ के निकट एक धनी महाजन रहता था। उसने विहार देखने और बुद्ध के दर्शन करने की कभी परवाह नहीं की। वास्तव में उनके प्रति उसके मन में अरुचि हो गई थी। वह सोचा करता था कि यदि बुद्ध की शिक्षा को सभी स्वीकार कर लें तो सांसारिक कामों से उनकी कोई दिलचस्पी नहीं होगी। वे अर्थोपार्जन का प्रयास नहीं करेंगे। तो उनके व्यापार का क्या होगा? जितना वह सोचता उतना ही बुद्ध पर उसे क्रोध आता।

एक दिन सुबह-सुबह धूप चमक रही थी। महाजन स्नान करने के लिए नदी जा रहा था। तभी उसकी नज़र अपने घर के सामने खड़े एक युवा भिक्षु पर पड़ गई। उसे देखते ही महाजन के बदन में आग लग गई। वह भिक्षा देने के लिए मना कर देता तो भिक्षु चुपचाप आगे बढ़ जाता। लेकिन उस युवा भिक्षु को वह शायद पाठ सिखाना चाहता था।

"इधर देख भले आदमी, आखिरकार तुम्हें यह बताने के लिए मुझे यह मौका मिल ही गया कि तुम दरअसल क्या हो। तुम आवारा हो, बेकार घूमनेवाला, मनमौजी। समझे?" वह चिल्लाकर बोला। लेकिन भिक्षु ने कुछ नहीं कहा। इससे महाजन का क्रोध और भड़क गया। वह एक कदम और आगे बढ़ा और अपने मुक्के से उसे धमकाता और चिल्लाता हुआ फिर बोला, "मैं तुम्हारे गुरु को जानता हूँ, राजकुमार गौतम। वह बेवकूफ है, आलसी है। और तुम उसका चेला, उससे भी गये गुजरे हो!"

धीरे-धीरे महाजन इतना उत्तेजित हो गया

कि वह जितनी गालियाँ जानता था सब आगन्तुक के लिए बकता गया। राहगीर उसके अदम्य क्रोध पर चकित हो खड़े होकर तमाशा देखने लगे। इससे उसका उत्साह और बढ़ गया और वह जितनी ताकत से चिल्ला सकता था, चीखने-चिल्लाने लगा। वह लगभग एक घण्टे तक पागल की तरह भिक्षु पर गालियों की बौछार करता रहा।

फिर उसे थकावट महसूस होने लगी। तब तक वह भिक्षु के और निकट आ गया था। भिक्षु का दिव्य, शान्त और अविचलित मुखमण्डल उसके ऊपर जादू सा प्रभाव डालने लगा। शीघ्र ही वह अनुभव करने लगा कि आगन्तुक ने अब तक एक शब्द भी नहीं कहा; और इस शान्त और गंभीर व्यक्ति में मेरी अकारण कटु फटकार की कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई।

अभी भी उसका क्रोध पूरी तरह गया नहीं था। उसने उसी लहजे में कहा, ''तुम चुपचाप क्यों हो? कुछ कहते क्यों नहीं?''

भिक्षु मुस्कुराया। उसने अपनी झोली से एक फल निकाला और महाजन को दिखाया। ''मेरे दोस्त'', उसने पूछा, ''मान लो कि मैं यह फल तुम्हें दूँ और तुम लेने से इनकार कर दो तो यह कहाँ जायेगा?''

''यह कहाँ जायेगा, यह पूछने का तुम्हारा तात्पर्य क्या है? यह तुम्हारे पास रहेगा! सामान्य बुद्धि!'' महाजन ने झुंझलाकर कहा।

''बिलकुल ठीक मेरे दोस्त! तुमने मुझे जो गालियाँ दीं मैंने उन्हें स्वीकार नहीं किया। इसलिए तुम समझ सकते हो कि वे कहाँ हैं।''

उस आदमी को जिन्दगी का सबसे बड़ा धक्का लगा। उसने महसूस किया कि उसकी सारी गालियाँ उसी के पास रह गईं। वे गन्दे शब्द आगन्तुक को छू न सके। सच, भिक्षु के मुखमण्डल पर तनिक भी परेशानी नहीं थी।

तब तक कुछ लोगों ने भिक्षु को पहचान लिया था जो स्वयं बुद्ध थे। उन सब ने झुककर अभिवादन किया। आश्चर्य, महाजन भी थोड़ा और निकट गया और विस्मय और भय की विचित्र संवेदना और श्रद्धा से उनके चरणों में गिर पड़ा।

वरदान, जो व्यर्थ हुए

हेलापुरी का निवासी सीताराम ग़रीब था। जंगल में वह लकड़ियाँ काटता था और उन्हें बेचकर परिवार के लिए आवश्यक चीज़ें खरीदता था। उसका परिवार बड़ा था। सब उसी की कमायी पर निर्भर थे। कभी-कभी वह जीवन से तंग आकर सोचता भी था कि कोई देवी-देवता प्रत्यक्ष हो जाएँ और उसकी डूबती नैया को पार लगा दें तो कितना अच्छा हो!

एक दिन यथावत् वह लकड़ियाँ काटने जंगल गया। सीताराम ने एक बड़े वृक्ष को चुन लिया और उस पर कुल्हाडी चलाने के लिए उद्यत हो गया। पर तभी गजब हो गया। उसे लगा कि किसी ने कुल्हाड़ी पकड़ ली। उसने मुड़कर देखा कि वृक्ष देवी कुल्हाड़ी को पकड़े हुए है।

वह वृक्ष देवी को देखता ही रह गया। तब वृक्ष देवी ने कहा, ''मैं वृक्ष देवी हूँ। इसे काटने की कोशिश मत करना। कितने ही सालों से मैं इसमें रहती आ रही हूँ। मैं तुम्हारी दरिद्रता भली-भांति जानती हूँ। मैं तुम्हें तीन वरदान दूँगी। जो तुम्हें पसंद हैं, माँगो। तुम्हारी दरिद्रता दूर हो जायेगी।''

''माते, ऐसा ही करूँगा। जो वृक्ष तुम्हारा निवास-स्थल है, मैं उसे नहीं काटूँगा, उस पर कुल्हाड़ी नहीं चलाऊँगा। एक-एक दिन एक-एक वर माँगता रहूँगा। अपना वचन अवश्य निभाओगी न?'' सीताराम ने संदेह-भरे स्वर में पूछा।

''अपना वचन अवश्य निभाऊँगी।'' कहकर वृक्ष देवी ग़ायब हो गयी।

सीताराम खुश हो घर लौटा। दुपहर होते ही उसने मन ही मन चाहा, ''मेरे परिवार के सब लोगों को खाने के लिए स्वादिष्ट भोजन चाहिए, जो पकवानों से भरा हो।''

उसने सोचा कि जैसे ही वह आँखें खोलेगा,

- मणिदीप शर्मा -

भोजन उसके सामने होगा। पर ऐसा नहीं हुआ। उसने आँखें खोलीं, पर एक भी पदार्थ वहाँ नहीं था। उसने सोचा कि उसके वर के फलीभूत होने में शायद थोड़ा और समय लगेगा। वह धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करता रहा।

इतने में किसी ने दरवाज़ा खटखटाया तो उसने जाकर दरवाज़ा खोला। सामनेवाली गली में रहनेवाला सोमशेखर एक बड़ी टोकरी अपने सिर पर रखे खड़ा था। उस टोकरी से तरह-तरह के पकवानों की सुगंध आ रही थी।

''आज हमने अपने घर में सत्यनारायण पूजा की। मेरी पत्नी ने आपको ये पक़वान देने मुझे भेजा।'' सोमशेखर ने कहा।

सीताराम ने उन्हें लेने से इनकार करते हुए कहा, ''थोड़ी ही देर में हमारे यहाँ नाना प्रकार के पकवान आनेवाले हैं। हो सकता है, तुम्हारे पकवान बेकार हो जाएँ। इन्हें ले जाओ,'' कुछ और कहे बिना उसने दरवाज़ा बंद कर लिया।

शाम हो गयी, पर सीताराम को किसी भी प्रकार का आहार नहीं मिला। वह ईतज़ार करते-करते थक गया और आखिर पत्नी से मोड बनवाकर पी लिया। यों उसने अपनी भूख मिटा ली।

वृक्ष देवी के वर के असफल हो जाने पर सीताराम को आश्चर्य हुआ। दूसरे दिन सबेरे उसने मन ही मन ठान लिया कि आज दूसरा वर माँगूँगा। इस बार उसने माँगा कि उसे एक महल चाहिये जिसमें दास-दासियाँ हों और सब प्रकार की सुविधाएँ हों। यही वर माँगते हुए उसने आँखें बंद कर लीं। आधे घंटे के बाद उसने आँखें खोलीं तो देखा कि उसकी पुरानी झोंपड़ी जैसी की तैसी है। इस बार सीताराम को आश्चर्य के साथ-साथ निराशा भी हुई।

इतने में किसी ने दरवाज़ा खटखटाया। दरवाज़ा खोला तो देखा कि एक अपरिचित व्यक्ति सामने खड़ा है। वह व्यक्ति कहने लगा, ''महाशय, मैं सुंगधिपुरी से आ रहा हूँ। आपके मामाजी किसी भी क्षण मर सकते हैं। उन्होंने आपको तुरंत वहाँ ले आने के लिए मुझे भेजा है।''

सीताराम ने मन में ठान लिया था कि जब तक वृक्ष देवी का वर सफल नहीं होगा तब तक घर से बाहर निकलने का नाम नहीं लूँगा। इसलिए

उसने उस आगंतुक से कहा, ''बुरा न मानना। मैं बहुत ज़रूरी काम में हूँ। मामाजी से कहिए कि मेरा वहाँ आना अभी संभव नहीं है।''

रात गुज़र गयी पर सीताराम की झोंपड़ी महल में परिवर्तित नहीं हुई। इस प्रकार वृक्ष देवी का दूसरा वर भी सफल नहीं हुआ तो वह दुखी हो गया। तीसरे दिन उसने खूब सोचकर वर माँगा कि वह उसे एक लाख सोने की अशर्फ़ियाँ दे।

सोने की लाख अशर्फ़ियों को तो उसने नहीं देखा, पर देखा, सामने खड़े लाठी लिये हुए दो लठैतों को। उन्होंने सीताराम से कहा, ''हमें ज़मींदार वीरभूपतिजी ने भेजा है। उनकी आज्ञा है कि हम आपको तुरंत उनके पास ले आयें।''

उनकी बातें सुनकर सीताराम पसीने-पसीने हो गया। एक बार ज़मींदार ने उसे देख लिया था, जब वह उनकी ज़मीन में एक पेड़ काट रहा था। तब नौकरों ने उसे पकड़ने की कोशिश की, पर वह भाग निकला। उसे लगा कि ज़मींदार ने उसे इसकी सज़ा देने के लिए बुलवाया और इसीलिए इन दोनों लठैतों को भेजा।

सीताराम ने काँपते हुए स्वर में कहा, ''देखिये, सुगंधिपुरी में मेरे मामाजी की तबीयत ठीक नहीं है। मुझे तुरंत वहाँ जाना है। सुंगधिपुरी से लौटने के बाद ज़मींदार के दर्शन करूँगा।

रात बीत गयी। सीताराम की तीसरी इच्छा भी पूरी नहीं हुई। वह नाराज़ हो उठा और कुल्हाड़ी लेकर जंगल में उस वृक्ष देवी के वृक्ष के पास गया।

वृक्ष देवी प्रत्यक्ष हुई और उससे पूछा, ''सीताराम, यह क्या? हाथ में यह कुल्हाड़ी कैसे? तीन वर मैं तुम्हें दे चुकी हूँ।''

''उन वरों में से एक भी वर मुझे नहीं मिला,'' उसने कहा और फिर जो हुआ, सब कुछ बता दिया।

''क्या कह रहे हो? कैसे कह सकते हो कि वे वर तुम्हीं नहीं मिले। मैंने तो तुम्हें पकवान भेजे थे। सुगंधिपुरी में तुम्हारे मामाजी मरते समय अपनी सारी जायदाद तुम्हें सौंपनेवाले थे, क्योंकि उनकी कोई संतान नहीं थी। वे अपना महल भी तुम्हें देना चाहते थे। उन्होंने ख़बर भिजवायी, पर तुम नहीं गये। मैंने ठीक कहा न?'' वृक्ष देवी ने पूछा।

सीतारामके मुँह से बात निकल नहीं पायी। इसका यह मतलब हुआ कि उसी के अज्ञान के कारण वे दोनों वर उसे प्राप्त नहीं हुए। उसे लगा कि अपने पैरों पर उसने खुद कुल्हाड़ी मार ली। अपने दुर्भाग्य पर चिंतित होते हुए उसने बड़े ही दीन स्वर में कहा, ''एक लाख सोने की अशर्फ़ियाँ माँगीं। पर तुमने क्यों नहीं दीं?''

वृक्षदेवी ने मुस्कुराते हुए कहा, ''तीनों वर फलीभूत नहीं हुए, यह तुम्हारा दुर्भाग्य है। इसका कारण है हद से बढ़कर तुम्हारा स्वार्थ। तुम्हारा लालच। सोने की अशर्फ़ियाँ देने के लिए ही ज़मींदार ने तुम्हें बुला भेजा था। पहले उनकी ज़मीन में जो वृक्ष तुमने काटा था, उसके तले उन्हें उनके पूर्वजों का छिपाया तांबे का एक कलसा मिला। उसमें सोने की दस लाख अशर्फ़ियाँ थीं। वह कलसा उन्हें मिला, तुम्हारी वजह से, इसलिए एक लाख अशर्फ़ियाँ तुम्हें देकर तुम्हारा सम्मान करना चाहते थे। पर तुम उनसे मिलने नहीं गये। इसलिए तुम्हें घमंडी मानकर उन्होंने वे लाख अशर्फ़ियाँ ग़रीबों में बाँट दीं।''

वृक्षदेवी की बातें सुनकर वह शिला की तरह खड़ा रह गया।

अपने को संभालते हुए उसने दीन स्वर में कहा, ''वृक्षदेवी, फिर से एक और बार तीन वर देने की कृपा करें।''

वृक्षदेवी ने 'न' के भाव में सिर हिलाया और कहा, ''एक बार से अधिक वर देने की शक्ति मुझमें नहीं है। अज्ञान, अविवेक और लोभ के कारण तुमने मेरे दिये वरों को व्यर्थ कर दिया। भाग्य मनुष्य के जीवन में एक ही बार दरवाज़ा खटखटाता है। बार-बार नहीं। पर तुम्हारे विषय में उसने तीन बार खटखटाया। अब तुम्हें स्वशक्ति पर ही भरोसा करके जीवन बिताना होगा। आगे से जंगल में सूखी लकड़ियों को ही काटना। पेड़-पौधों को किसी भी तरह की हानि नहीं पहुँचाना। जब तक तुम उनकी रक्षा करते रहोगे, तब तक मेरी कृपा से तुम्हें और तुम्हारे परिवार को भूखा रहने की नौबत नहीं आयेगी। इसे मेरा आशीर्वाद समझो।'' यह कहकर वह अदृश्य हो गयी।

सिक्किम की एक लोक कथा

भारत के उत्तर-पूरब में सिमटा हुआ है सिक्किम का पर्वतीय राज्य। यह वास्तव में दुनिया के तीसरे उच्चतम शिखर कंचनजंघा (८,५९८ मी.) से नीचे हिमालय की पादगिरि में स्थित है।

समुद्र तल से इसकी ऊँचाई में काफी विविधता है, जहाँ कम से कम यह ३०० मी. और अधिक से अधिक ८,५८५ मी. ऊँचा है और राज्य के कुल क्षेत्रफल का केवल एक छोटा प्रतिशत आवास योग्य है।

राज्य ७,०९६ वर्ग कि.मी. में फैला हुआ है। यहाँ की कुल जनसंख्या ५४०४९३ है। सिक्किम के उत्तर में तिब्बत, दक्षिण में प.बंगाल, पूरब में भूटान और पश्चिम में नेपाल है।

सिक्किम में वहाँ के लोग कंचनजंघा को खांगचेंडजोंगा कहते हैं और उसकी पूजा करते हैं। उनका विश्वास है कि यह शिखर उनके प्रदेश का अभिभावक देवता है।

तीस्टा यहाँ की मुख्य नदी है। सिक्किम सन् १९७५ में २६ अप्रैल को भारत का एक राज्य बन गया। इसकी राजधानी गंगटोक है।इसके पूर्व यहाँ के शासक को चोम्याल कहा जाता था। यहाँ की राज भाषा अंग्रेजी है लेकिन नेपाली, हिन्दी, सिक्किमी तथा लेपचा भी बोली जाती है।

जादूगरनी और खूबसूरत लड़कियाँ

पहाड़ी के नीचे एक मनोरम घाटी में एक रमणीक उपवन और एक छोटी कुटिया थी जिसमें कोमतारहप और जरखारहप नाम की दो खूबसूरत लड़कियाँ रहती थीं। कोमतारहप की आवाज इतनी मीठी थी कि जब वह गाती थी तब फूल खिल जाते थे। जब छोटी बहन जरखारहप संगीत के ताल पर नृत्य करती तब सांगी, सूना तथा सु-चायक जैसे जंगली जानवर भी उसके साथ नाचने लगते।

उपवन भगवान रुमू का था जिसमें कुछ बहुत सुंदर और दुर्लभ फूल थे। दोनों बहनें शैतानी

हाथों से विशेष कर ल्यांगबार की जादूगरनी तैंगप से उपवन की रक्षा करती थीं। जादूगरनी लोगों पर आक्रमण करने से पहले उनके सपने में प्रकट होती थी। किसी भी रूप में अपने आपको बदल लेने की उसमें शक्ति थी और उसके रूप से मंत्रमुग्ध होने से कोई बच नहीं सकता था।

एक दिन जरखारहप ने एक विचित्र सपना देखा। उसने सपने में देखा कि तैंगप उसकी बहन का सुनहला तकिया छीन रही है। वह चीखती हुई उठ गई। उसकी चीख सुनकर कोमतारहप की भी नींद टूट गई। वे दोनों उदास हो गये। वे समझ गये कि तैंगप किसी भी समय आक्रमण कर सकती है।

जैसे ही लड़कियाँ यह सोचने लगीं कि क्या करना चाहिये वैसे ही उन दोनों ने उपवन में घूमती हुई एक सुंदर युवती को देखा।

''यह कौन हो सकती है? मैं आशा करती हूँ कि छद्म वेश में वह तैंगप नहीं है!'' कोमतारहप भयभीत होकर बोली।

छोटी बहन ने तुरंत उसका सुनहला तकिया अपने हाथ में ले लिया। ''मुझे पक्का विश्वास है कि यह तैंगप है। देखो, कैसे वह सीधे हम लोगों के पास आ रही है!'' उसने तकिये को छाती से चिपकाते हुए कहा।

तैंगप उनके पास आकर बगल में बैठ गई और बोली, ''मैंने इतनी खूबसूरत लड़कियाँ कभी नहीं देखी हैं। इसमें आश्चर्य करने की बात नहीं है कि ल्यांगबार का पुनू तुम्हारी सुंदरता पर मुग्ध

है। मैं तुम दोनों को वहाँ ले जाने के लिए आई हूँ। वह तुम दोनों से शादी करना चाहता है। यदि तुम जल्दी तैयार हो जाओ तो शाम होने से पहले हम वहाँ पहुँच सकते हैं।''

''हम यहाँ खुश हैं। हम लोग रानी बनना नहीं चाहते। रानी बनने के गुण भी हममें नहीं हैं। मेहरबानी करके हमें यहीं रहने दो।'' कोमतारहप ने कहा।

इस पर तैंगप क्रोधित हो उठी। उसकी नीयत बुरी थी। उसने देखा कि उसकी योजना विफल हो रही है। उसने लड़कियों को धमकाया। ''यह पुनू का आदेश है और तुम मना नहीं कर सकती। तैयार हो जाओ और मेरे साथ ल्यांगबार चलो।''

दोनों बहनें डर गईं। उनका यह संदेह पक्का हो गया कि यह युवती वही जादूगरनी है। कोमतारहप ने उसे शान्त करने की कोशिश की,

''क्रोध न करो। तुम भूखी होगी। कुछ खा लो।'' फिर उसने उसे ज़ो का पूरा तवा और भुना हुआ भेड़ दिया। युवती ने उसे तुरंत भकोस लिया और ज्यादा माँगने लगी। दोनों बहनों ने रसोई में जो कुछ था सब दे दिया; उसे भी युवती ने झट चट कर डाला। बहनों को अब पूरा विश्वास हो गया कि यही जादूगरनी तैंगप है।

खाने के बाद तैंगप ने फिर दोनों बहनों को अपने साथ चलने के लिए मजबूर किया। कोमतारहप कुछ समय और टालना चाहती थी, इसलिए उसने कहा, ''मुझे कुछ काम है। मुझे अपने खेत को जोत लेने दो और उसमें बीज बो लेने दो।''

''घबराओ नहीं। मैं इसे तुम्हारे बदले अभी कर देती हूँ।'' जादूगरनी ने कहा। तब उसने कुछ मंत्र का उच्चारण किया और अपना हाथ हिलाया। तुरंत आश्चर्यों का आश्चर्य घटित हो गया। क्षण भर में खेत जोत दिया गया और बीज बो दिया गया। फिर उसने दोनों बहनों को तैयार हो जाने के लिए कहा।

जरखारहप ने निवेदन किया, ''लेकिन मुझे धान पीटना है और कपड़ा बुनना है। मैं इस काम खत्म कर तुम्हारे साथ चलूँगी।'' जादूगरनी ने अपने जादू से क्षण भर में सब काम कर दिया। अब दोनों बहनों के पास कोई बहाना न था, इसलिए मजबूरन उन्हें जादूगरनी के साथ जाना पड़ा।

कुछ देर तक यात्रा करने के बाद वे एक नदी किनारे पहुँचे। वहाँ से उन्हें महल दिखाई पड़ा। दोनों बहनों ने महल को देखकर राहत की साँस ली। ''हमलोग महल के निकट हैं, अब हमें कोई हानि नहीं पहुँचेगी। शायद यह पुनू की संदेशवाहिका है।'' जरखारहप ने कहा।

लेकिन उनका यह सोचना गलत निकला। जादूगरनी महल से कुछ दूर पहले रुक गई। वह नदी के निकट जाकर बोली, ''आओ, पुनू से मिलने से पहले अपने को ताजा कर लो।'' जब कोमतारहप ने मुँह धोने के लिए चुल्लू में पानी लिया, तैंगप ने उसे गू में बदल दिया और नदी में फेंक दिया।

जरखारहप ने यह अपनी आँखों से देखा और डर से थरथर काँपने लगी। उसने भागने की कोशिश की किन्तु तैंगप ने उसे तुरंत पकड़ लिया। तैंगप ने तब कहा, ''घबराओ नहीं, यदि मेरी बात मानती जाओ तो मैं तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ूँगी।'' फिर उसने अपने को कोमतारहप

के रूप में बदल कर कहा, ''क्या मैं तुम्हारी बहन के समान नहीं दिखाई पडती?'' जरखारहप भौचक रह गई। तैंगप ठीक उसकी बहन की तरह लग रही थी।

ये दोनों पुनू के महल की ओर बढ़े। जादूगरनी ने अपने को कोमतारहप कहकर परिचय दिया और जरखारहप को अपनी नौकरानी बताया। पुनू ने उसके सौंदर्य पर मंत्रमुग्ध होकर तुरंत उससे विवाह कर लिया। वे शाही ठाट बाट से महल में रहने लगे। जरखारहप को सुबह से शाम तक घरेलू काम करने के लिए मजबूर किया जाता।

जरखारहप को दोपहर के बाद उसकी बकरियों को चराने के लिए घास के मैदान में जाना पड़ता था। हर शाम को तैंगप बकरियों को गिनने के बहाने अपनी गहरी भूख मिटाने के लिए दो-तीन बकरियाँ खा जाया करती थी।

एक दिन जरखारहप को नदी किनारे बकरियों को चराते समय अपनी बहन की याद आ गई। वह उससे बातें करने लगी और अपनी हर रोज की तकलीफें बताने लगी। फिर वह उसके लिए रोने लगी। अचानक उसने अनुभव किया कि नदी की ओर से कोई उसकी बातों का जवाब दे रहा है। वह एक मछली थी। जरखारहप ने महसूस किया कि वह उसकी बहन है। अचानक वह मछली अपने असली रूप में आ गई, जिसकी कोई आशा नहीं थी। दोनों बहनों ने बहुत देर तक बातें कीं। कोमतारहप जादूगरनी के प्रभाव में थी। वह पानी में रह रही थी और हरेक दिन केवल एक घंटे के लिए बाहर आ सकती थी।

जरखारहप यह जानकर बहुत खुश हुई कि उसकी बहन जीवित है। उसके बाद वे हर रोज मिलने लगे। अब जरखारहप के नजरिये में बहुत फर्क आ गया। वह अपने सारे काम हँसती-खेलती करने लगी।

तैंगप ने भी इस परिवर्तन पर ध्यान दिया। ''वह बहुत खुश रहती है। मुझे लगता है कि वह अपनी बहन से मिल चुकी है। केवल तभी वह इतना खुश रह सकती है। मैं कल पता करूँगी।'' उसने सोचा।

दूसरे दिन तैंगप ने जरखारहप को बाहर जाने

बौद्ध विहार

सिक्किम विहारों से भरा पड़ा है। राज्य भर में २०० से अधिक विहार हैं। ये यहाँ के निवासियों की जीवन शैली के भाग हैं और उनकी सांस्कृतिक परंपरा पर इनका बहुत प्रभाव है। ये विहार अथवा गोम्पाज सिक्किम के अभिन्न भाग हैं; उनमें अधिकांश नाईंगमापा या कारग्यूपा सम्प्रदाय से संबंधित हैं।

से रोक दिया और बकरियों को चराने के लिए खुद ले गई।

वहाँ उसने कोमतारहप को देखा। लेकिन तैंगप उसे पकड़े, उसके पहले ही वह नदी में कूदने में कामयाब हो गई और पुनः मछली बन गई।

निराश तैंगप महल में लौट आई। इस बीच जरखारहप अपनी बहन की सुरक्षा के लिए चिंतित थी। वह विलख-विलख कर रोने लगी। तभी पुनू अपनी रानी से मिलने आया। उसने वहाँ जरखारहप को बिलखते देखा। इसके पहले उसे वह बराबर उदास देखता था। उसने समझा कि उसकी कोई समस्या होगी। अब उसने उससे आग्रह किया कि वह उस पर भरोसा करके उसे अपनी समस्या बताये।

जरखारहप ने उसे अपनी पूरी कहानी सुना दी। "क्या? यह विश्वास करने योग्य नहीं है! क्या तुम सच कह रही हो?" पुनू ने आश्चर्य के साथ पूछा।

"यदि तुम्हें विश्वास न हो तब रात में बकरियों के बाड़े में छिप जाओ। तुम देखोगे कि वह कुछेक को निगल जायेगी। इसीलिए बकरियों की संख्या बहुत कम हो गई है।"

उस रात को पुनू बाड़े में छिप गया। उसे आधी रात को वहाँ रानी को आते देखकर आश्चर्य हुआ। उसने तब अपना असली रूप धारण किया और तीन बकरियों को चट कर डाला और चुपचाप महल में वापस चली गई।

दूसरे दिन पुनू ने महल के निकट एक नया कमरा बनवाने का आदेश दिया। उसने उसे ठाट बाट से सजाया। फिर उसने पलंग के नीचे एक गड्ढा खुदवाया और उसे तेज धार वाले हथियारों से भर दिया।

वह जादूगरनी के पास जाकर बोला, "मैंने सिर्फ़ तुम्हारे लिए एक कमरा बनवाया है। आकर उस पर एक नज़र डाल लो।" असंदेही जादूगरनी पुनू के साथ वहाँ गई और कमरे की शानदार सजावट देखकर खुशी से झूम उठी। वह पलंग पर बैठने गई। जैसे ही वह बैठी, पलंग ढ़ह गया और वह गड्ढे में गिर गई। इसके तेज धारवाले हथियारों से उसके शरीर के टुकड़े-टुकड़े हो गये।

पुनू और जरखारहप नदी किनारे गये। वहाँ कोमतारहप इनका इंतजार कर रही थी। जादूगरनी के मर जाने से कोमतारहप पर उसके जादू का प्रभाव खत्म हो गया। पुनू ने अब असली कोमतारहप से शादी कर ली। दोनों बहनें महल में सुखपूर्वक रहने लगीं।

- विद्याराज द्वारा पुनर्कथित

समाचार झलक

भारतीय के लिए पुलिराजर पुरस्कार

गीता आनन्द कभी भारत की राष्ट्रीय तैराकी चैम्पियन थी। मुम्बई में कथीड्रल स्कूल में पढते समय वह हेड गर्ल थी तथा स्कूल के समाचार पत्र का सम्पादन करती थी जिसमें वह अन्तर्सदन प्रतियोगिताओं तथा स्थानीय घटनाओं पर लिखा करती थी। पत्रकारिता में उसकी रुचि ने अन्ततोगत्वा उसे न्यूयार्क से प्रकाशित वाल स्ट्रीट जर्नल तक पहुँचा दिया जिसमें उसने हाल के वित्तीय गवन पर अनेक धारावाहिक निबन्ध लिखे। इन निबन्धों ने इसे पत्रकारिता के प्रतिष्कित पुलिटजर पुरस्कार की भेंट दी है जिसकी घोषणा अप्रैल में की गई। वह इस सफलता का श्रेय कथीड्रल स्कूल की प्रिंसिपल को देती है जिसने उसे बीस साल पहले लिखते रहने के लिए प्रोत्साहित किया।

पहली पुस्तक पर रेकार्ड-मूल्य

शीला क्विग्ली को अब निर्वाह के लिए सरकारी मदद की जरूरत नहीं पड़ेगी, क्योंकि वह अपने पहले उपन्यास से रातोरात करोड़पति बन गई है। तीस साल पहले जब उसके पति ने उसे छोड़ दिया था तब उसकी कोई आमदनी नहीं थी। सरकार ने उसे सुंदरलैण्ड में रहने के लिए निःशुल्क मकान दिया था। तीन साल पहले उसे उस मकान को छोड़ना पड़ा क्योंकि उसे ध्वस्त किया जा रहा था। वह सिर पर एक उपयुक्त छत के लिए मारी-मारी फिरती रही। तभी उसने एक उपन्यास लिखना शुरू किया जिसका शीर्षक उसने रखा - घर के लिए भाग-दौड़। यदि प्रकाशक प्रायः नये लेखकों से खास कर अधेड़ उम्र के लेखकों से कतराते हैं तो शीला ने उन्हें गलत साबित कर दिया है। चार प्रमुख प्रकाशकों ने ढाई लाख पौण्ड देने की पेशकश की है; जो भी हो, रैंडम हाऊस ने उस रकम की दुगुनी राशि देकर प्रकाशन का अधिकार खरीद लिया है। प्रकाशक का कहना है कि शीला में एक होनहार लेखक की संभावना है।
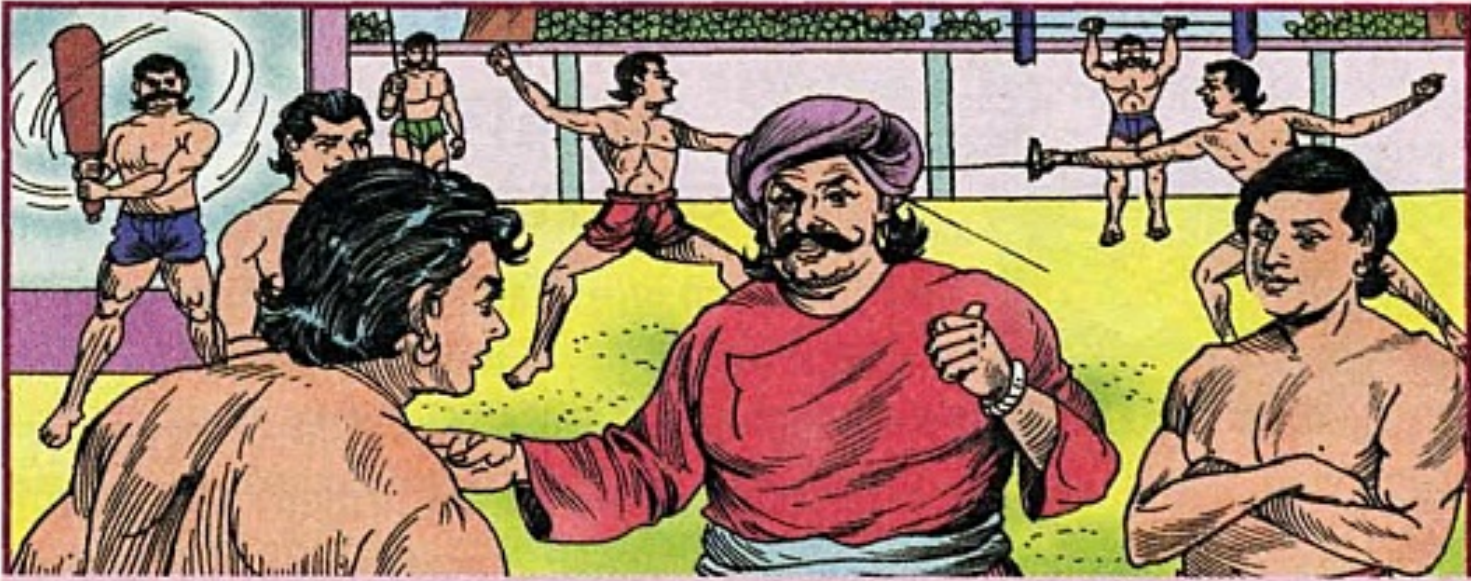
गुरुदक्षिणा

बहुत पहले समरस नामक गुरु रहा करते थे। वे व्यायामशालाएँ चलाते थे। मल्लयुद्ध, खड्गयुद्ध आदि विद्याएँ सिखाया करते थे। द्रोण समरस परम्परा का एक ऐसा ही गुरु था, जो गोपालपुर नामक नगर में ये विद्याएँ सिखा रहा था। इस विद्या की पूर्ति के बाद वह अपने शिष्यों को नीति शास्त्र की भी शिक्षा प्रदान करता था। शिक्षा की समाप्ति के बाद शिष्य यथासंभव गुरु दक्षिणा उसे देते थे और घर लौट जाते थे।

विजयवर्मा त्रिपुरा के ज़मींदार का बेटा था। वह द्रोण से शिक्षा पा रहा था। मल्लयुद्ध में वह दक्ष बन गया। गदा घुमाने में भी उसकी बराबरी का कोई नहीं था।

एक बार विजयवर्मा को परशुराम नामक सहविद्यार्थी ने मल्लयुद्ध में हरा दिया। वह समरस के परिजनों में एक मामूली परिवार का था। एक सामान्य युवक के हाथों हारने के कारण विजयवर्मा के अभिमान को धक्का लगा।

द्रोण ने यह भांप लिया और वर्मा से कहा, ''वर्मा, जहाँ तक प्रतिभा की बात है, उसके लिए संपन्न और दरिद्र दोनों समान हैं। परशुराम ने इन विद्याओं को सीखने के लिए काफी परिश्रम किया और लगन के साथ इन्हें सीखकर वह प्रतिभावान बना।''

कुछ समय बाद, जब विजयवर्मा और परशुराम की शिक्षा पूरी हो गयी तब उन्होंने गुरु दक्षिणा देने का निश्चय किया। गुरु से पूछा भी कि उन्हें क्या चाहिए। तब द्रोण ने उन दोनों से कहा, ''जिन विद्यार्थियों ने मुझसे शिक्षा पायी, उनमें से तुम दोनों सबसे अधिक दक्ष व प्रतिभावान हो। जो विद्याएँ तुम दोनों ने सीखीं उन्हें प्रयोग में लाओ, उनमें और दक्ष

- लता उत्तुंग -

बनो और अपने कौशल को और बढ़ाओ। ज़रूरत पड़ने पर मैं तुम दोनों से खुद मिलूँगा और गुरु दक्षिणा लूँगा।''

चार साल गुज़र गये। पिता की मौत के बाद विजयवर्मा त्रिपुरा का ज़मींदार बना। ज़मींदार का कार्यभार संभालते हुए भी वह मल्लयुद्ध में विशेष अभिरुचि दिखाता रहा। वह देश के सभी मल्लयोद्धाओं के बीच हर साल एक प्रतियोगिता चलाता था। जो सब मल्लयोद्धाओं को हराता था, उससे वह खुद लड़ता था। वह उससे कहता, ''मुझे हराओगे तो मैं तुम्हारा सम्मान करूँगा। परंतु मेरे हाथों जो हारेगा उसे कभी भी मल्लयुद्ध में भाग लेना नहीं चाहिए। परंतु हाँ, उसके निर्वाह के लिए आवश्यक सहूलियतों का प्रबंध करूँगा।''

प्रतियोगिता में ज़मींदार को हराने पर एक ही बार सम्मान होगा परंतु उसके हाथों हारने पर जीवन भर सुख के साथ रहा जा सकता है। सब मल्लयोद्धाओं को इसलिए लगा कि जीतने से हारना ही बेहतर है। सबके सब मल्लयोद्धा इस प्रलोभ में आ गये। इस कारण ज़मींदार के हाथों हारने का महाभाग्य पाने के लिए वे अन्य मल्लयोद्धाओं को हराने में बड़ी ही चुस्ती से लड़ते थे, पर अंत में जब विजयवर्मा से विजेता मल्लयुद्ध करता था, तब वह ज़मींदार के हाथों हारने में ही अपनी भलाई समझता था।

द्रोण को विजयवर्मा के इस कपट-नाटक के बारे में मालूम हुआ। उसने परशुराम को अपने
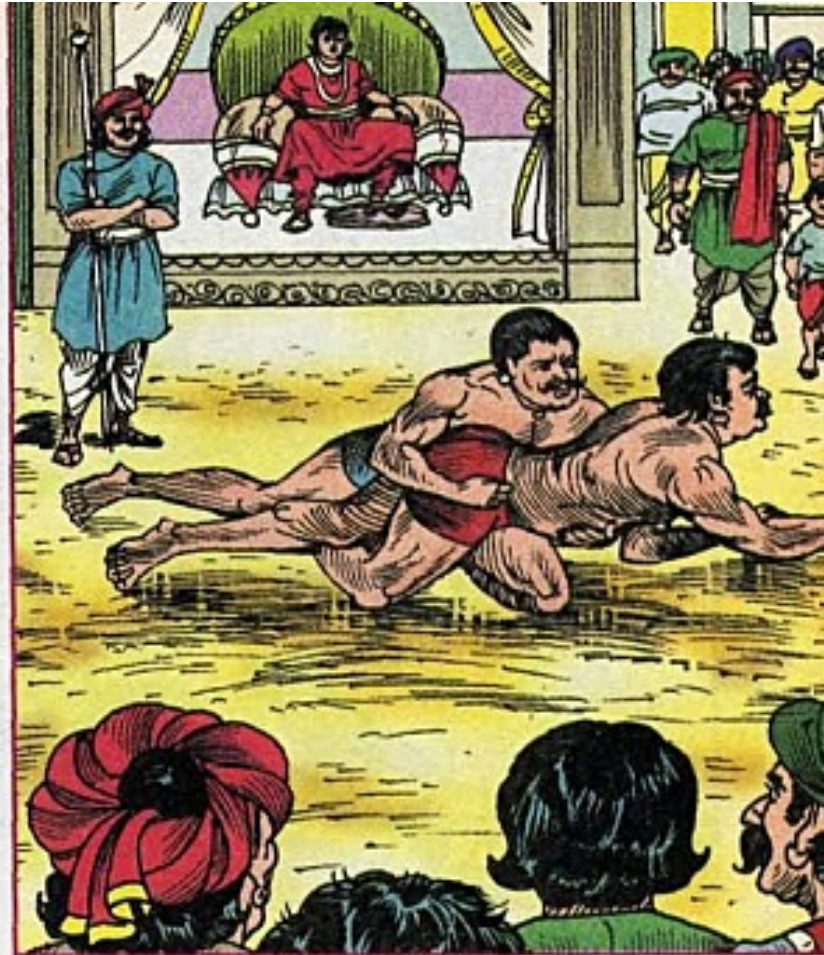
यहाँ बुलवाया और उससे कहा, ''विजयवर्मा द्वारा चलाये जा रहे मल्लयुद्ध की प्रतियोगिताओं के बारे में मैंने सुना है। उन प्रतियोगिताओं में तुमने क्यों भाग नहीं लिया?''

परशुराम ने विनयपूर्वक उत्तर दिया, ''गुरुवर, विजयवर्मा को अपने महान मल्लयोद्धा होने का गर्व है। प्रतिभावान मल्लयोद्धाओं में सुख-सुविधाओं की आशा जगाकर वह उन्हें आसानी से हरा रहा है। विजयवर्मा को हराने की शक्ति यद्यपि मुझमें है, पर मैं उसे हराने की इच्छा नहीं रखता, क्योंकि ऐसा करने पर उसके अहंकार को चोट लगेगी और वह कुछ भी अनर्थ कर सकता है।'' द्रोण को यह बात सही लगी।

''विजयवर्मा की वजह से कितने ही सक्षम व प्रतिभावान मल्लयोद्धा सुस्त बनते जा रहे हैं।
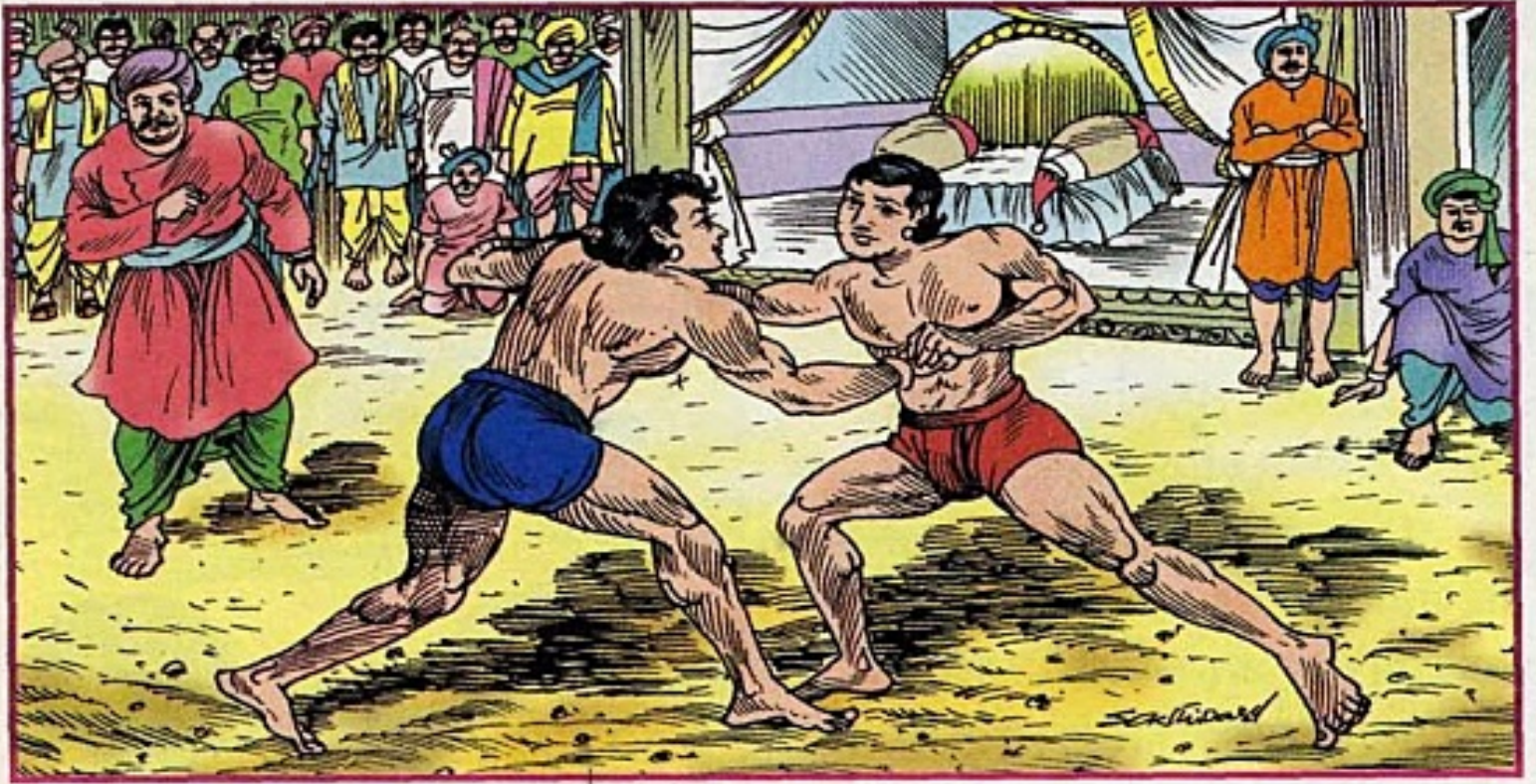
वे अपनी प्रतिभा को प्रकट करने के लिए तैयार नहीं हैं। सुख के जाल में फंसकर वे अकर्मण्य बन रहे हैं।'' द्रोण ने सोचा और निर्णय लिया कि वह गुरु दक्षिणा की आड़ में परशुराम के द्वारा विजयवर्मा को पाठ सिखायेगा और उसे सही राह पर लायेगा।

परशुराम को लेकर द्रोण त्रिपुरा आया। उसने विश्रामगृह में परशुराम से रहने को कहा और अकेले ही वह विजयवर्मा से मिला। विजयवर्मा ने गुरु का सादर स्वागत किया। कुशल-मंगल पूछने के बाद द्रोण ने वर्मा से कहा, ''वर्मा, मैं पहले ही कह चुका हूँ कि जिन्होंने मुझसे विद्याएँ सीखीं, उनमें तुम और परशुराम सबसे अधिक दक्ष और प्रतिभावान हो। मेरी बड़ी ही तीव्र इच्छा है कि अपने दानों शिष्यों के बीच मल्लयुद्ध को देखूँ। अपने ज़मींदार होने का अहंकार छोड़ो और मेरी सिखायी विद्या को प्रदर्शित करते हुए परशुराम को हराओ।''

विजयवर्मा ने गुरु का प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार कर लिया। द्रोण ने विश्राम-गृह में लौटने के बाद सारी बातें परशुराम से बतायीं और कहा, ''परशुराम, जो मल्लयुद्ध तुम्हारे और विजयवर्मा के बीच में होनेवाला है, उसमें तुम्हें अवश्य जीतना है। वही तुम्हारी गुरुदक्षिणा होगी। परंतु तुम्हें एक काम और करना होगा। जीत जाने के बाद तुम्हें लोगों को विश्वास दिलाना होगा कि वह तुम्हारी जीत नहीं, बल्कि हार है। मुझसे यह मत कहना कि यह कैसे संभव हो सकता है? मल्लयुद्ध के साथ-साथ मैंने तुम्हें लौकिक ज्ञान तथा नीतिशास्त्र भी सिखाया है। वे समयानुसार अवश्य ही तुम्हें सहायता पहुँचायेंगे।''

दूसरे ही दिन सबेरे विजयवर्मा और परशुराम के बीच मल्लयुद्ध प्रारंभ हो गया। विजयवर्मा ने इसके पहले कितने ही विजयी मल्लयोद्धाओं को हराया, पर वे सबके सब जान-बूझकर, सुख की आशा में हारते थे। पर परशुराम की बात अलग थी। वह भी एक प्रतिभावान मल्लयोद्धा था। और वह किसी सुख की आशा से लड़ नहीं रहा था। दोनों ने अपने-अपने दांव-पेंचों का प्रयोग किया। लोग बड़ी ही उत्कंठा से उनका मल्लयुद्ध देखने लगे। वे निर्णय नहीं कर पाते थे कि इनमें से कौन जीतेगा। परशुराम ने कोई ढिलाई नहीं दिखायी। विजयवर्मा को हराकर गुरुदक्षिणा देने का उसने दृढ़ निश्चय कर लिया था। आखिर वह अपने लक्ष्य में सफल हो गया और विजयवर्मा को हरा दिया।

विजयवर्मा को हारते हुए देखकर लोग स्तब्ध रह गये। तब परशुराम ने सबको प्रणाम करते हुए कहा, ''ज़मींदार मल्लयुद्ध में महान प्रतिभाशाली हैं। मैंने पराजित होने का भरपूर प्रयत्न किया, पर उन्होंने ऐसा होने नहीं दिया। वे नहीं चाहते थे कि मुझ जैसा मल्लयोद्धा सुखों के प्रलोभन में हार जाए, इसलिए वे स्वयं हार गये। सच्चे विजेता ज़मींदार हैं।''

लोगों ने ज़ोर से तालियाँ बजायीं। विजयवर्मा ने लंबी सांस खींचते हुए कहा, ''परशुराम असाधारण मल्लयोद्धा है। मैं इसके हाथों दूसरी बार हार रहा हूँ। युद्ध विद्याओं में स्वार्थ और गर्व के लिए कोई स्थान नहीं है। मैंने अब तक मल्लयोद्धाओं को सुख का प्रलोभन दिखाया, उन्हें हराते हुए अपने अहंकार को संतृप्त करता रहा। आज मेरे सहपाठी ने मेरे गर्व को चूर-चूर कर दिया। मैं सच्चे हृदय से परशुराम को बधाई देता हूँ।''

दोनों शिष्यों की पीठ को थपथपाते हुए द्रोण ने कहा, ''तुम दोनों ने अपनी-अपनी तरफ़ से मेरी मन चाही गुरु दक्षिणा दे दी और इसकी मुझे बड़ी खुशी है। अब आगे से संपन्न होनेवाले मल्लयुद्धों में कौशल और प्रतिभा के लिए ही स्थान होगा। मुझे विश्वास है कि मल्लयोद्धा भविष्य में सुखों के लिए सुस्त और आलसी नहीं बनेंगे।''

अपने भारत को जानो

१. पं. जवाहरलाल नेहरू ने तीन ग्रंथ लिखे। उनके नाम तथा उनके प्रकाशन के वर्ष नीचे दिये गये हैं। उनका मिलान कीजिए।

अ) आत्मकथा	१) १९३४
ब) भारत की खोज	२) १९३६
स) विश्व इतिहास की झलक	३) १९४६

२. मोतीलाल नेहरू का व्यवसाय क्या था?

अ) प्रोफेसर

ब) वकील

स) डाक्टर

३. इस फोटो में पं. नेहरू किसके साथ घड़ी का समय मिला रहे हैं?

४. किस देश में पं.नेहरू की बहन विजयलक्ष्मी पंडित भारत की राजदूत थी?

अ) चीन ब) सोवियत रूस

स) अमेरिका

५. इंदिरा गाँधी जब प्रधानमंत्री बनी तब उसकी उम्र क्या थी?

अ) ४९ ब) ५३ स) ५७

६. इंदिरा गाँधी प्रधानमंत्री बनने से पूर्व केंद्रीय मंत्री थी। उनका विभाग क्या था?

अ) सूचना एवं प्रसारण

ब) शिक्षा स) स्वास्थ्य

७. प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी को एक महत्वपूर्ण विधि निर्माण का श्रेय प्राप्त है। निम्नलिखित में से कौनसा?

अ) जलमार्गों का राष्ट्रीयकरण

ब) इस्पात कारखानों का राष्ट्रीयकरण

स) बैंकों का राष्ट्रीयकरण

८. इंदिरा गाँधी दूसरी बार प्रधानमंत्री कब बनी?

अ) १९७१ ब) १९७५ स) १९८०

(उत्तर अगले महीने)

अगस्त प्रश्नोत्तरी के उत्तर

१. अ-३, ब-१, स-२

२. रामचन्द्र

३. बाल गंगाधर तिलक, गणेश चतुर्थी।

४. यह चित्र दिवाली और होली पर्वों का मिश्रण है। ये दोनों अलग-अलग महीनों में आते हैं।

५. ब।

विघ्नेश्वर

होमकुंड से पैदा हुए भयंकर जानवर के गायब होते ही काल ने विघ्नासुर का रूप धर लिया और काल के पाश को दूर फेंक दिया। कालपाश चक्कर लगाते हुए प्रलयकारी ध्वनि केसाथ चारों तरफ़ घिर गया। अभिनंदन ने साहसपूर्वक उसे काटने की कोशिश की और इस प्रयत्न में वे नीचे गिर गये। अब कालपाश चारों तरफ़ फैलकर सारे प्राणियों का अंत करने लगा। इस पर वसिष्ठ आदि सप्तर्षि ब्रह्मा की प्रार्थना करने लगे।

''कालपाश से रक्षा करना किसी के लिए भी मुमक़िन नहीं है! काल-प्रवाह को रोककर कालयम पर क़ाबू रखनेवाले सिर्फ़ गणेशजी अकेले हैं!'' ब्रह्मा ने समझाया, तब सब ने साथ मिलकर जगत की रक्षा करने के लिए गणेशजी की प्रार्थना की। महागणापति ने स्वस्तिका पीठ पर आसीन हो दर्शन दिये और अपने हाथ में स्थित पाश को छोड़ दिया।

गणेशजी के पाश ने कालपाश को इस तरह फंसा दिया, जैसे जाल में चिड़िया को फंसा दिया जाता है। पराजय के मारे क्रुद्ध होकर काल ने अपने भयंकर विघ्नासुर के रूप में कालदण्ड को झटका दिया। इस पर गणेशजी ने अपने अंकुश को छोड़ा। वह अंकुश जाकर विघ्नासुर की रीढ़ में चुभ गया।

अंकुश के आघात से विघ्नासुर ढेर हो गया। फिर भी अंकुश बराबर विघ्नासुर की रीढ़ में चुभता गया, इस पर विघ्नासुर शरण माँगनेवाले जैसे गणेशजी के दोनों पैरों के बीच फंस गया।

उस हालत में कालयम विघ्नासुर की आकृति

से निकलकर गणेशजी की प्रार्थना करते हुए बोला, ''गणेशजी, आपके महा विश्वपाश के सामने इस पृथ्वी और सूर्योदय तथा सूर्यास्त तक सीमित मेरे कालपाश का महत्व ही क्या है? विश्व पर नियंत्रण रखनेवाले आपके अंकुश के सामने मेरा दण्ड किस खेत की मूली है? आप विघ्नेश्वर हैं ! हे देव, मेरी रक्षा कीजिए !''

इस पर विघ्नेश्वर बोले, ''हे कालयम ! तुमने दूसरों के कार्य को अपने सर पर लेकर नाहक़ ख़तरा मोल लिया है ! तुम सिर्फ़ अपने कर्तव्य का पालन करो !''

काल ने अपने कान पकड़कर तीन बार उठा बैठी की। तब बोला, ''भगवान, मेरी अक़्ल पर पत्थर पड़ गया था। इंद्र की बातों में आकर मैंने यह अपराध किया है ! हे विघ्नेश्वर ! आप पर विश्वास करके जो लोग आपकी पूजा करते हैं, उनके कार्यों में कोई विघ्न-बाधा न पड़ेगी !'' यों विघ्नेश्वर से माफ़ी माँगकर काल ने विदा ली।

विघ्नेश्वर ने कालयम क । जब परा भव किया, तभी कालपाश के छूट जाने की वजह से महाराजा अभिनंदन वगैरह लोग इस तरह सजीव होकर उठे, जैसे वे नींद से जाग उठे हों ! उस वक़्त चारों तरफ़ फूलों की वर्षा हुई। उस समय सब लोगों ने विनायक को विघ्नेश्वर तथा विघ्नराजा पुकारा और उनकी स्तुति की।

उस दिन से कोई भी शुभ कार्य प्रारंभ करते वक़्त स्वस्तिका की रंगोली बनाना और हल्दी के ढेले को विघ्नेश्वर का प्रति रूप मानकर उनकी पूजा करना एक संप्रदाय के रूप में चल पड़ा।

अंत में पावन मिश्र ने ये शब्द कहक अपनी कहानी समाप्त की, ''काल पुरुष का पराभव करके उसे अपना दास बनानेवाले विघ्नेश्वर के भक्त कालप्रवाह के विरुद्ध चलकर भी विजय प्राप्त कर सकते हैं !''

एक दिन एक बालिका पावन मिश्र की छिगुनी पकड़कर उसे एक चित्र के पास ले गई। उस चित्र में एक अपूर्व सुन्दरी कन्या विघ्नेश्वर की मूर्ति के सामने घुटने टेककर प्रणाम कर रही थी ! कन्या का सर रंगोली की टोकरी जैसी थी ! पावन मिश्र ने उसी की कहानी शुरू कर दी।

विघ्नेश्वर की पूजा करने के कारण एक आदर्श दंपति के घर एक सुंदर कन्या पैदा हुई। पैदा होते

ही वह लड़की प्रसूति गृह के सामने आले में रखी विघ्नेश्वर की प्रतिमा को अपने विस्फारित नयनों से देखते हुए इस तरह किलकारें करने लगी मानो वह मूर्ति उसे पुकार रही हो।

झूले में झूलते वक़्त गणेशजी की मूर्ति को देखते, मुस्कुराते, किलकारें मारते वह लड़की खेला करती थी। उस लड़की का सुंदरी नामकरण किया गया। अपने नाम के अनुरूप सुंदरी बड़ी रूपवती थी और वह धीरे-धीरे विवाह के योग्य हो गई। सुंदरी गुणवती और बुद्धिमती भी थी, इस कारण उसे लोग ज्ञान सुंदरी पुकारने लगे।

सुंदरी के बारे में लोग कहने लगे कि वह शाप के कारण पृथ्वी पर अवतरित देव कन्या है! उसके साथ विवाह करने के लिए बड़े-बड़े धन कुबेर और अधिकारी भी सुंदरी के पिता पर दबाव डालने लगे। एक दिन उन्हें पता लगा कि सुंदरी के गुण-सौंदर्य पर प्रभावित हो एक छोटे देश का राजा उस कन्या को अपने रनिवास में ले जाने के लिए सदल-बल आ रहा है।

सुंदरी विघ्नेश्वर की मूर्ति के सामने घुटने टेककर प्रार्थना करने लगी, "हे विघ्नेश्वर! बचपन से ही मैं आप पर विश्वास करके बैठी हूँ। पारिवारिक सागर में मैं बहकर जाना नहीं चाहती। कृपया मुझे बूढ़ी बना दीजिए! मुझे ज्ञान की संपदा प्रदान कीजिए!'' इस बीच उसके काले केश चाँदी के जैसे चमकते सफ़ेद हो गये। उसके कोमल कपोलों पर झुर्रियाँ पड़ गईं।

सुंदरी के माता-पिता आँखों में आँसू भर कर बोले, "बेटी, यह सब क्या है?'' इसके जवाब में वह कन्या बोली, "मैं कन्या नहीं हूँ, सुंदरी भी नहीं हूँ, नानी हूँ। आप लोग ख़ुश होने के बदले चिंता क्यों करते हैं? आपने मुझे जन्म दिया, इस जन्म को सार्थक बनाने का गणेशजी ने अनुग्रह किया। जो लोग अज्ञानी हैं, उन्हें मैं अपने अल्प ज्ञान के द्वारा हित के बचन सुनाऊँगी! वे सब बच्चों के समान हैं। और मैं उनकी नानी हूँ!

"मेरा जन्म दिन तो आज ही है! मैं पद-यात्रा पर निकल र ही हूँ! मुझे आशीर्वाद दीजिए!'' ये शब्द कहते वहाँ पर गिरी हुई पेड़ की एक डाल की मदद से वह उठ खड़ी हुई।

उसी वक़्त राजा वहाँ पर पहुँचा। इस पर नानी ने राजा से पूछा, "जनता के धन, प्राण,
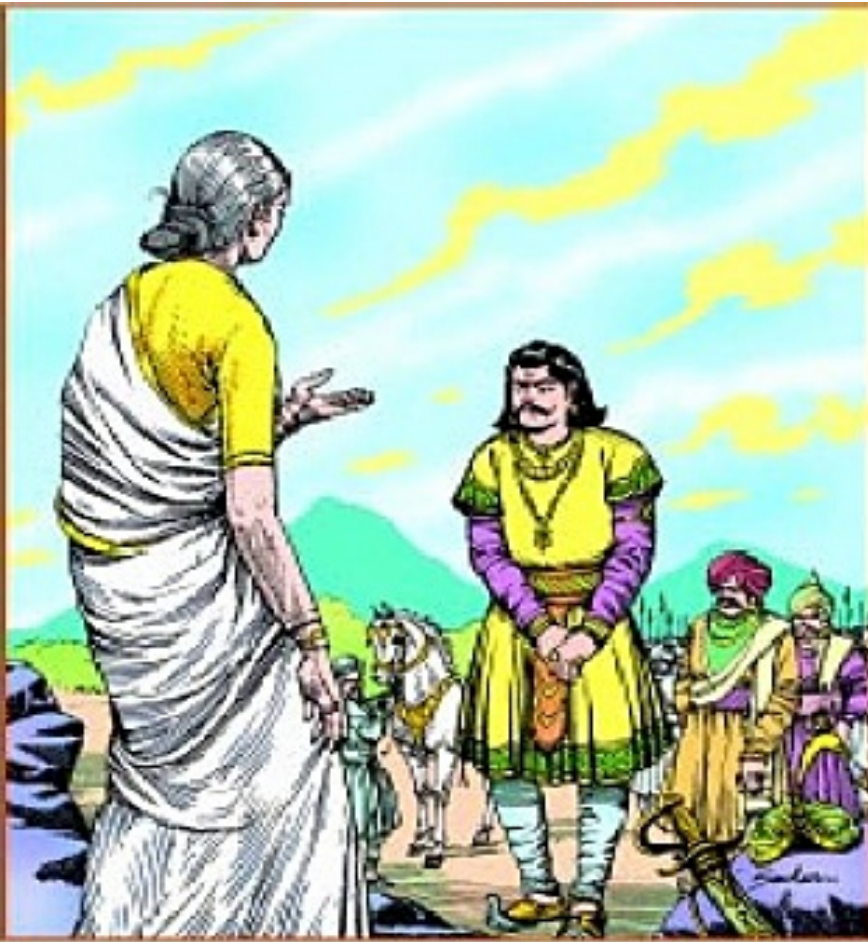
इज़्ज़त और कन्याओं की रक्षा करने की जिम्मेदारी रखनेवाले तुम क्या एक कन्या को उठा ले जाने आये हो? क्या तुम गाँव-घर लूटनेवाले दल के नेता हो? या राजा हो?''

नानी के मुँह से फटकार सुनने पर लज्जा के मारे राजा अधमरा सा हो गया। उसने अपनी तलवार और मुकुट को दूर पर रखकर नानी के चरणों में प्रणाम किया। फिर विनती करने लगा, ''महादेवीजी ! आपके दर्शन पाकर मेरा अज्ञान दूर हो गया। आज से मैं राजा के ठाठ-बाट को छोड़ जनता के सेवक के रूप में शासन करूँगा।''

इसके बाद सब लोग नानी को कारण जन्मा बताकर प्रशंसा करने लगे। साथ ही पैदल चलनेवाली नानी से पालकी पर सवार हो देशाटन करने की राजा ने प्रार्थना की।

मगर नानी ने राजा की विनती को साफ़ इनकार करते हुए कहा, ''राजन्, जूते तक न ख़रीद पा सकनेवाली साधारण जनता के बीच मैं पालकी पर जाकर किस मुँह से उन्हें उपदेश दे सकती हूँ? साधारण व्यक्ति के बीच रहकर जो कुछ मैं कर सकूँगी, जरूर करूँगी।''

इसके बाद नानी ज्ञान पीठ बने एक मठ में पहुँची। उस पीठ के अधिपति को प्रणाम करके निवेदन किया, ''महानुभाव, मुझे ज्ञान का उपदेश दीजिए।''

पीठ के अधिपति ने संकोच करते हुए कहा, ''माताजी, आप तो नारी हैं ! ज्ञानोपदेश पाकर आप क्या करेंगी?''

नानी ने कहा, ''क्या जल और दीप पुरुष के ही काम देते हैं? नारी के लिए किसी काम के नहीं? क्या अंधे के हाथ का दीप दूसरों के लिए रास्ता दिखा नहीं सकता है? ज्ञानी तो यह बताते हैं कि जो कुछ नहीं है, वही सब कुछ है, और सबके भीतर एक ही तत्व है। इस सिद्धांत के अनु सार जन्म के द्वारा उच्च-नीच का मूल्यांकन करना क्या उचित है?''

इस पर पीठ के अधिपति ने कहा, ''महामही, इस ज्ञान पीठ पर बैठने योग्य आप ही हैं, मैं नहीं हूँ।''

''इन पीठों और मठों की क्या ज़रूरत है? सबकी समझ में आने लायक उनके निकट जाकर ज़्यादातर लोगों को ज्ञान कराना अच्छा होता है न? अनेक प्रकार के व्यंजन और मिष्टान्न

एक व्यक्ति को खिलाने के बदले सब लोगों के खाने लायक़ भोजन ज़्यादातर लोगों को खिलाना अच्छा होता है न?'' नानी ने पूछा।

''जी हाँ, मैं आइंदा इसी सिद्धांत का पालन करूँगा।'' यों कहते पीठाधिपति ने सर झुकाया।

नानी अब आगे बढ़ी। एक कुएँ के पास चार औरतें खड़ी थीं। कुएँ से पानी ले जाने के मामले को लेकर एक औरत अन्य औरतों से अधिकारपूर्वक कह रही थी, ''चाहे कोई पहले आई हो या पीछे? लेकिन सबसे पहले मैं पानी भर कर ले जाऊँगी। इसके बाद क्रम से यह औरत, इसके बाद वह और सबके बाद यह नाटी औरत को पानी लेना होगा!''

थोड़ी दूर पर खड़ी एक लड़की दीन स्वर में चिल्ला रही थी, ''माईजी, मेरा गला सूखता जा रहा है। थोड़ा पानी पिलाओ तो!''

चारों स्त्रियाँ एक स्वर में चिल्लाकर डांट रही थीं, ''अरी, दूर हट जाओ! तुम्हारी छाया तक हम पर न पड़े।'' इस पर कहीं दूर से धूप में पैदल आई वह लड़की गश खाकर गिर पड़ी।

उस वक़्त नानी ने जाकर अपने लोटे से उस लड़की के मुँह में पानी डालकर पिलाया। जो पानी बचा था, उसे पीकर नानी ने अपनी प्यास बुझाई। इसे देख चारों औरतें नाक पर उँगली रखकर बोलीं, ''उफ़! नानीजी, तुमने

यह क्या किया? तुम उसके झूठे जल को पी लेती हो? वह तो निम्न जाति की लड़की है।''

नानी डकार लेकर शांत स्वर में बोली, ''सुमंगलियो, मेरी कोई जाति ही नहीं है; मगर इस लड़की और मेरी नसों में भी एक ही पानी बह रहा है, इसीलिए पानी ने हमारी प्यास बुझाई !'' यों कहकर कौतूहल के साथ आगे बढ़कर नानी ने उन औरतों के घड़ों में झाँककर देखा, और आश्चर्य पूर्ण स्वर में बोली, ''मैं समझ रही थी कि तुम लोगों के शरीर में दूध है। तुम लोगों के वास्ते पानी की ज़रूरत ही क्या है? पीने के लिए तो नहीं है न? माताओ, तुम लोग हमें पानी दे दो और दूध पी लो !''

चारों औरतों ने नानी की बातों की सचाई को भांप लिया और ज्ञान का प्रकाश पाया। इसके बाद नानी फिर आगे बढ़ी ! एक स्थान पर बकरों की बलि दी जा रही थी। जनता इस तरह देवी को प्रणाम कर रही थी, मानो देवी से डर गई हो।

नानी बोली, ''माता, ये लोग कैसा अन्याय कर रहे हैं? ये लोग तो माँस में मसाले छोड़कर भूनकर खाते हैं ! तुमको तो कच्चा खून पीकर जीनेवाले खूँख्वार जानवर जैसा मानकर तुम्हारा अपमान कर रहे हैं, ये लोग माता का अपमान करनेवाले बच्चों जैसे हो गये हैं।''

नानी के मुँह से ये बातें सुनकर लोग चिल्ला उठे, ''पाप शांत हो ! पाप शांत हो ! देवीजी का क्रोध भड़केगा तो वह सबको भस्म कर देंगी।'' इसके जवाब में नानी बोली, ''बताओ, क्या कोई माता अपने बच्चों को इस ख्याल से खा लेगी कि उसे रिश्वत नहीं दिया गया है? तुम लोग अकारण ही डरते हो ! बस, भय को ही तुम लोग भक्ति मान बैठे हो ! तुम अपनी कामनाओं को माता के माथे पर मढ़ रहे हो? माताजी के प्रति तुम लोगों के मन में जिस दिन सच्ची भक्ति पैदा होगी उस दिन तुम्हारे भीतर किसी तरह का न भय होगा और न तुम्हें कोई ख़तरा ही होगा।'' इसके बाद नानी ने उन लोगों की समझ में आने लायक़ भाषा में भक्ति मार्ग का उपदेश दिया।
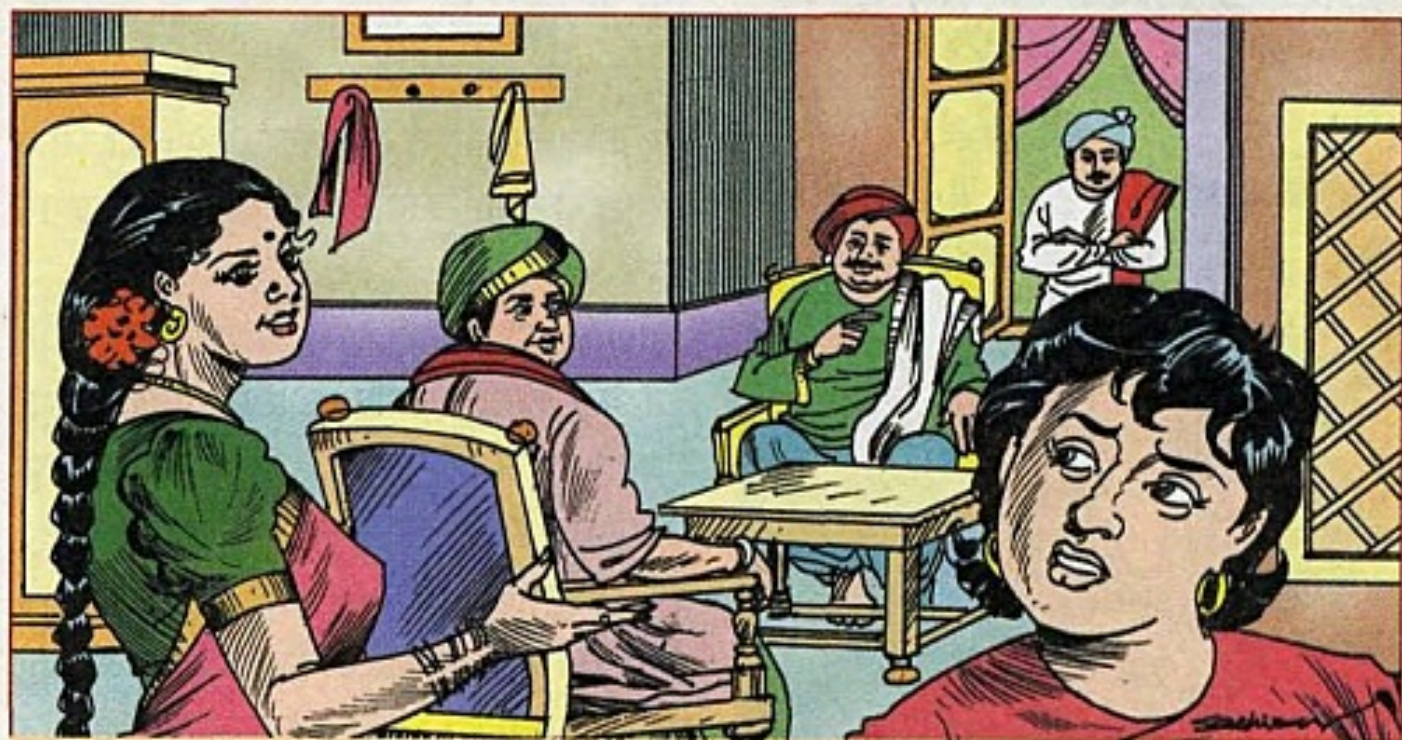
भार्गव की तपस्या

बहुत पहले की बात है। द्रविड़ देश में एक पंडित रहा करता था। उसके चार बेटे थे। तीन बेटों ने उसी का शिष्यत्व स्वीकार किया और थोड़ा-बहुत पांडित्य भी प्राप्त कर लिया। परंतु चौथा बेटा कुछ पढ़-लिख नहीं पाया। पिता ने यथासाध्य प्रयत्न किया, पर वह निरक्षर ही रहा।

भार्गव का पिता सदा अपने पुत्र की निरक्षरता को लेकर चिंतित रहता था। भार्गव की ही आँखों के सामने उसके भाइयों का आदर-सम्मान होता और उसका निरादर। वह जानता था कि इसका कारण उसकी निरक्षरता है। इस सत्य को लेकर वह कभी-कभी तीव्र रूप से सोचने लगता था। भार्गव पढ़ना चाहता था, पर पता नहीं क्यों, वह पढ़ नहीं पाता। पढ़ाई शुरू करने के पहले किसी व्यर्थ बात को लेकर वह सोचने लगता था और उसी सोच में डूब जाता था।

भार्गव के पिता को लगा कि शायद उसके अध्यापन में कोई कमी है, इसलिए उसे एक गुरुकुल में भर्ती कर दिया। भार्गव ने वहाँ पशु-पालन तथा पेड़-पौधों का संरक्षण तो सीखा पर शिक्षा प्राप्त नहीं कर सका।

इस बीच एक घटना घटी। भार्गव के दूसरे भाई के विवाह के संबंध में दुलहनवाले उसके घर आये हुए थे। भार्गव को उन्होंने वहाँ देखा तो उसके बारे में उन्होंने पूछताछ की।

भार्गव का पिता उन्हें इसका उत्तर दे, इसके पहले ही भार्गव की बड़ी भाभी ने ताना कसते

- कुलभूषण पांडे -

हुए कहा, ''यह हमारा आखिरी देवर है। वाल्मीकि की बराबरी का है।''

भार्गव ताड़ गया कि यह ताना उसी को लेकर है और भाभी तपस्या के पूर्व के वाल्मीकि से उसकी तुलना कर रही है। वह शर्म से गड़ गया। वह वहाँ से तुरंत गाँव के बाहर चला आया।

वह सोचने लगा, भील ने तपस्या की और फलस्वरूप महाज्ञानी वाल्मीकि बना। क्यों न मैं भी तपस्या करूँ और उतना ही महान बनूँ। इसी सोच में पड़कर उसने घर न जाने का निश्चय कर लिया और जंगल में चला गया।

सूर्योदय के एक घंटे के बाद अरण्य में उसे ऋषि का एक आश्रम दिखाई पड़ा। ऋषि आश्रम के सामने ध्यान में मग्न थे। जटाओंवाले एक बरगद के पेड़ के नीचे बैठकर वह भी ध्यान में मग्न हो गया। पर, शाम हो जाने के बाद भी, उसके ध्यान में एकाग्रता नहीं आयी।

क्रमशः सूर्यास्त होने लगा। ऋषि का ध्यान समाप्त हो गया, उन्होंने आँखें खोलीं और अपने चारों ओर देखा।

तब भार्गव उनके पास आया और साष्टांग नमस्कार करते हुए अपने बारे में सब कुछ बताया, ''ऋषिवर, जो मेरे अपने हैं वे भी मेरा मज़ाक उड़ाने लगे हैं। जीवन से मुझे विरक्ति हो गयी है। मैंने सोचा कि अशिक्षित होते हुए भी भगवान का ध्यान करने का मुझे अधिकार है। मैं आपकी सेवा में आया हूँ। अपना जीवन तपस्या में लीन होकर गुज़ारना चाहता हूँ। मुझपर कृपा कीजिए। तपस्या करने की शक्ति मुझे प्रदान कीजिए। मैं एकाग्रचित्त होकर तपस्या कर पाऊँ, यह वरदान दीजिए।''

भार्गव की बातों को श्रद्धापूर्वक सुन चुकने के बाद ऋषि ने कहा, ''पुत्र, भगवान के बनाये निर्देशों के अनुसार मानव पहले गृहस्थाश्रम में प्रवेश करेगा और फिर वानप्रस्थ आश्रम में। ऐसे छोटे-मोटे कारणों की आड़ में जीवन से विरक्त होना और भगवान द्वारा व्यवस्थित जीवन धर्म का अतिक्रमण करना प्रकृति विरुद्ध कार्य है।''

भार्गव ने ऋषि के उपदेश को अस्वीकार करते हुए निवेदन किया, ''ऐसा मत कहिए, स्वामी। भगवान के ध्यान में मग्न होकर प्रशांत जीवन बिताना मेरा ध्येय है। यही जीवन मेरे लिए पर्याप्त है।''

ऋषि ने कहा, "भार्गव, मैं अब नदी में नहाने निकल रहा हूँ। कल इसी वक़्त आकर मुझसे मिलना।"

दूसरे दिन भार्गव को देखते ही ऋषि ने मुस्कुराते हुए कहा, "पुत्र, तपस्या के पूर्व तुम गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना नहीं चाहते हो तो कम से कम तुम्हें शारीरिक परिश्रम अवश्य करना होगा। क्या इसके लिए तुम सन्नद्ध हो?"

भार्गव ने इसके लिए अपनी स्वीकृति दी। तब ऋषि ने कहा, "मेरे साथ चलो।" फिर, वे उसे लेकर एक गाँव गये।

गाँव में अधेड़ उम्र का एक व्यक्ति चबूतरे पर बैठा हुआ था। उसने ऋषि को देखते ही सविनय प्रणाम किया और चबूतरे से उतरा।

ऋषि ने उससे कहा, "लोकनाथ, तुमसे एक उपकार की प्रत्याशा में आया हूँ। इस लड़के का नाम भार्गव है। तुम्हें अपनी ज़मीन में से एक एकड़ ज़मीन साल भर के लिए इसके सुपुर्द करनी है। इससे खेती कराना तुम्हारी जिम्मेदारी होगी। खेती से जो फल मिलेगा, उसे बेचने की जिम्मेदारी भी तुम्हारी ही होगी।"

लोकनाथ ने, ऋषि के प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार किया। लौटने के पहले ऋषि ने भार्गव से कहा, "तुमने सुन लिया न? एक साल तक लोकनाथ के शिष्यत्व में यथासाध्य परिश्रम करो। एक साल पूरा हो जाने के बाद मेरे पास आना।"

भार्गव ने एक वर्ष तक बहुत परिश्रम किया। उसने एक एकड़ जमीन पर तरह-तरह के फल

और सब्जियाँ उगायीं। लोक नाथ के अतिरिक्त गाँव के लोग भी उसकी प्रशंसा करने लगे।

एक साल देखते-देखते यों गुज़र गया। वह टोकरी भर के तरह-तरह के फल लिये ऋषि के पास पहुँचा और साष्टांग नमस्कार किया।

ऋषि ने मुस्कुराते हुए पूछा, "कहो भार्गव, जीवन के प्रति तुममें जो विरक्ति थी, वह क्या वैसी ही बनी हुई है अथवा तुममें कोई परिवर्तन हुआ है?"

"बड़ा परिवर्तन हुआ है, स्वामी", क्षण भर रुककर उसने कहा, "उस गाँव के राम मंदिर के पुजारी, अपनी बेटी का विवाह मेरे साथ करना चाहते हैं।"

"ऐसी बात है ! इसका यह अर्थ हुआ कि तुम तपस्वी बनने के बदले गृहस्थ बनने जा रहे

हो।'' ऋषि ने कहा। भार्गव ने सिर झुकाकर संकोच भरे स्वर में कहा, ''आपका आशीर्वाद हो तो मैं गृहस्थ बनना चाहता हूँ, स्वामी।''

ऋषि ने ''तथास्तु'' कहते हुए उसे आशीर्वाद दिया और कहा, ''तुममें जो परिवर्तन हुआ है, उसे देखते हुए मुझे हर्ष हो रहा है। पुत्र, तुममें ऐसा परिवर्तन हो, इसी इच्छा से मैंने तुम्हें लोकनाथ के सुपुर्द किया। मेरा अनुमान सही निकला। मानव सुख-शांति से जीवन बिताना चाहता है। तो यह कोई आवश्यक नहीं है कि वह अवश्य शिक्षित ही हो। जीवन के प्रति सही सूझ-बूझ चाहिए। मानव की सोचने की पद्धति भिन्न-भिन्न होती है। उसकी अभिरुचियाँ अलग-अलग होती हैं। परिश्रम ही तपस्या है। तुमने कहा था कि गुरुकुल में रहते समय तुम्हें पशु व पेड़-पौधों के पालन-पोषण में काफ़ी अभिरुचि है। याद है?''

''हाँ, स्वामी'' भार्गव ने उत्साहपूरित होकर कहा।

''यह सुनते ही मैंने निश्चय कर लिया था कि तुम्हें कृषि क्षेत्र में लगाऊँ। सच कहा जाए तो माता-पिता का यह कर्तव्य बनता है कि वे अपने बच्चों की अभिरुचियाँ जानें और तदनुसार उन्हें प्रोत्साहित करें। पर दुर्भाग्यवश इस दिशा में तुम्हें अपने माता-पिता का सहयोग नहीं मिला। तुम्हारे जैसे लड़के इसी कारण तपस्या व वैराग्य की ओर आकर्षित होते हैं। अब बताओ, मैंने तुम्हें तपस्या का सही मार्ग दर्शाया है न?'' ऋषि ने कहा।

ऋषि की मर्म भरी बातों को सुनकर भार्गव की आँखों में आँसू छलक पड़े। दोनों हाथ उठाकर उसने प्रणाम करते हुए कहा, ''अब कोई संदेह नहीं रह गया, स्वामी। आपका उपदेश सदा याद रखूँगा और उसी प्रकार की तपस्या करते हुए, मुझ जैसा भटका कोई मिल जाए तो उसे भी समझाकर सही मार्ग पर ले आने का प्रयत्न करूँगा। चलता हूँ, स्वामी, अनुमति दीजिए।''

फिर ऋषि की अनुमति पाकर भार्गव वहाँ से चला गया।

कहानीकार

शारदापुर नामक गाँव में शिव नामक एक वृद्ध रहा करता था। कहानियाँ बताने में वह सिद्धहस्त था। कोई भी कहानी वह दोहराता नहीं था। वह जब कहानी सुनाने लगता था, लोग मंत्रमुग्ध होकर सुनते रह जाते थे। और सुनने की उनकी तीव्र इच्छा होती थी। वह जब कहानी सुनाना समाप्त करता था, लोग निराश हो जाते थे। इस बात पर उन्हें दुख होता था कि कहानी इतनी जल्दी क्यों ख़त्म हो गयी।

बच्चे खाना खाने से जब इनकार करते थे, हठ करते थे, तब माताएँ उन्हें शिव के पास ले आती थीं। शिव उन्हें मनाता था और कहानियाँ सुनाया करता था। जब बच्चे चुपचाप कहानी सुनने लग जाते थे तो माताएँ उन्हें खाना खिलाने लग जाती थीं। बच्चों को कहानियों सुनाने में शिव को बहुत आनंद मिलता था।

प्रताप नारायण रामापुर का बड़ा भूस्वामी था। इर्द-गिर्द के गाँवों में इतना बड़ा भूस्वामी और कोई नहीं था। वह अब बीमार होकर हमेशा खाट पर पड़ा रहता था। अनारोग्य के कारण उसके मन की शांति भी जाती रही। दूर-दूर से उसकी चिकित्सा के लिए वैद्य भी बुलाये गये। पर कोई फ़ायदा नहीं हुआ। वैद्यों ने सलाह दी कि मन प्रशांत होने पर ही उसका स्वास्थ्य सुधर सकता है।

अपने मन को शांत रखने के लिए उसने संगीत सुना। रामायण, महाभारत, पुराण सुनता रहा। आध्यात्मिक ग्रंथों का पठन किया। पर ये सब उसे मानसिक शांति दे नहीं पाये।

इन परिस्थितियों में प्रताप नारायण ने शिव और उसकी कहानियों के बारे में सुना। उसने ख़बर भिजवाकर शिव को अपने यहाँ बुलवाया।

- मागेश्वर -

शिव उसी के महल में रहने लगा और एक हफ़्ते तक लगातार उसे कहानियाँ सुनाता रहा।

शिव की कहानियों ने प्रताप नारायण को प्रसन्न किया। क्रमशः उसका स्वास्थ्य सुधरता गया और उसका मन भी शांत हुआ। एक दिन प्रताप नारायण ने शिव से कहा, "शिव, तुम्हारी कहानियाँ मुझे बहुत अच्छी लगीं। तुम्हारे गाँव में तुम्हारा अपना कोई नहीं। तुम यहीं रह जाओ। यहाँ मैं तुम्हारे लिए सारी सुविधाओं का प्रबंध करूँगा। मुझे कहानियाँ सुनाते रहना।"

प्रताप नारायण की बातें शिव को भी सही लगीं। भूस्वामी के भवन में सब सुविधाएँ थीं, स्वादिष्ट भोजन मिलता था, तिसपर नारायण जैसे बड़े आदमी का आदर भी प्राप्त हो रहा था इसलिए उसने वहीं रह जाने का निश्चय कर लिया।

शिव की कहानियाँ सुनते हुए प्रताप नारायण निश्चिंत होकर दिन गुज़ारने लगा। पर उधर शारदापुर गाँव के ग्रामवासियों की असंतृप्ति दिन ब दिन बढ़ती जाने लगी। गाँव के प्रमुखों ने निश्चय किया कि किसी भी हालत में शिव को स्वग्राम ले आना होगा। इसके लिए उन्होंने चार प्रमुख लोगों को प्रताप नारायण के पास भेजा।

उन चारों लोगों ने प्रताप नारायण से निवेदन किया, "शिव के गाँव में न होने से वहाँ की स्थिति बड़ी गंभीर हो गयी है। बच्चे खाना खाने से इनकार कर रहे हैं, उनकी माताएँ ज़ार-ज़ार रो रही हैं। स्थिति बड़ी ही दयनीय है। कृपया आप शिव को हमारे यहाँ भेज दीजिए।"

प्रताप नारायण ने कड़ुवे स्वर में उनसे कहा, "शिव यहाँ बस गया है। किसी भी हालत में उसका आप के गाँव में जाना संभव नहीं है। उसे आप भूल जाइये।" यों कहकर उन्हें भेज दिया।

यों दो तीन महीने गुज़र गये। क्रमशः शिव में भी असंतृप्ति बढ़ने लगी। वह प्रताप नारायण को भी ठीक तरह से कहानियाँ सुना नहीं पा रहा था। प्रताप नारायण भी यह भांप गया कि शिव की कहानियों में वह पुरानी शक्ति नहीं रही। उसे वे फीकी लगने लगीं।

एक दिन शिव ने नारायण से कहा, ''महोदय, आप बुरा न मानें तो मेरी एक विनती है।''

''कहो,'' प्रताप नारायण ने कहा।

''मेरा मन अशांत है। बग़ल के गाँव में रामचंद्र नामक एक युवक है। मालूम हुआ है कि कहानियाँ सुनाने में वह दक्ष है। उसकी कहानियों सुनने की मेरी इच्छा है। तभी मुझे शांति मिलेगी।''

प्रताप नारायण को उसकी इच्छा पर कोई आश्चर्य नहीं हुआ। उसने कहा, ''मैं जान गया हूँ कि तुम्हारा मन क्यों अशांत है। अपने मन की शांति के लिए यह कोई ज़रूरी नहीं है कि तुम उस रामचंद्र से कहानियाँ सुनो। तुम तुरंत अपना गाँव लौट जाओ। उस गाँव की ठंडी हवा, स्वच्छ जल, तुम्हारी अशांति को दूर कर देंगे। बच्चों को कहानियाँ सुनाने पर ही तुम्हें आत्मतृप्ति मिलती है, मैं यह जान गया।''

शिव ने खुश होते हुए कहा, ''आपने बिलकुल ठीक कहा। मेरे मन की बात आप ताड़ गये। यह बताने से मैं संकोच कर रहा था। जब से मेरे गाँव के लोग मुझे ले जाने आये थे, तब से मुझमें असंतृप्ति ने घर कर लिया। मुझे लगने लगा कि मैंने कुछ खो दिया। कहानियाँ सुनते हुए बच्चे जिस आनंद का अनुभव करते थे, हर्षातिरेक से उनके चेहरे जो खिल जाते थे, उसे कभी भूल नहीं सकता। वे दृश्य अब भी मेरी आँखों के सामने हैं। उन्हें संतुष्ट रखना, खुश रखना मेरा फर्ज़ है। आपकी अनुमति हो तो मैं स्वग्राम चला जाऊँगा।''

इसके बाद प्रताप नारायण जब कभी भी अपने को अशांत महसूस करता तो वह शिव का गाँव चला जाता था और उसकी सुनायी कहानियाँ सुनकर तृप्त होता था।

जल-संरक्षण कैसे करें?

नल खुला न रखें : हम लोगों ने एक खराब आदत यह बना ली है कि ब्रश करते समय नल को खुला रखते हैं। ब्रश करते समय यदि एक मग पानी पास में रख लें तो हरेक दिन अनेक लीटर पानी बचा सकते हैं।

बून्द की टपक को रोकें : बूंद की हर टपक महत्वपूर्ण है। हर टपक से हरेक दिन लगभग ३५ ली. पानी नष्ट हो जाता है। यदि पुराने घिसे वाशर और वाल्व को बदल दें तो पानी की यह बर्बादी रोकी जा सकती है।

अपनी वाशिंग मशीन तभी चलायें जब मशीन की पूरी क्षमता भर कपड़े हो जायें।

कार धोते समय बाल्टी का प्रयोग करें, रबर का नल नहीं।

कुछ लोगों के लिए दुनिया छोटी नहीं है। जिन्हें हर दिन पेय जल का एक घड़ा लाने के लिए १० कि.मी. या इससे भी अधिक पैदल चलना पड़ता है, उनके लिए दुनिया सिर्फ पानी के चारों ओर घूमती है।

जल संरक्षण के प्रति जागरुकता लाने तथा दीर्घकालीन विकास के हित में जल की बर्बादी को रोकने के लिए भारत जुलाई और अगस्त महीनों को जल-मास के रूप में मना रहा है। कोई सरकार अधिक से अधिक कानूनी और आर्थिक ढाँचा दे सकती है, लेकिन संरक्षण और पुनरावर्तन हम-नागरिकों पर निर्भर करता है। हरेक दिन कुछ ऐसा एक काम करने का प्रयास करो जिससे पानी की बचत हो। इस बात की चिन्ता न करो कि बचत बहुत कम हुई है। हर बूंद का महत्व है। और हममें से प्रत्येक कुछ न कुछ फर्क ला सकता है। इसलिए अपने माता-पिता, मित्रों और पड़ोसियों को कहो कि वे नल को "बंद कर दें" और उससे "दूर रहें।"

जल बचाओ !

जल अमृत है। लेकिन आवश्यक सावधानी के साथ इसका प्रयोग नहीं किया जाता और हरेक व्यक्ति इस पर अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानता है। भविष्यवाणी की गई है कि सन् २०२५ तक धरती का पानी ५० प्रतिशत रह जायेगा। हम लोग ताजे जल का भण्डार बढ़ा नहीं सकते : लेकिन जो कर सकते हैं वह यह कि इसके प्रयोग की विधि में परिवर्तन ला सकते हैं। नीचे जल तथा जल संरक्षण संबंधी कुछ तथ्य और आंकड़ें दिये गये हैं :

जल-तथ्य

ताजा जल पृथ्वी की जलापूर्ति के २ प्रतिशत से भी कम है।

१० से ३० ली. तक ताजा जल सामान्य शौचालय में बहा दिया जाता है।

हरेक आदमी को हरेक दिन पीने के लिए लगभग १० प्याला पानी चाहिए।

घरेलू प्रयोग में सबसे अधिक पानी का खर्च स्नान करने में किया जाता है।

दस मिनट के औसत स्नान पर लगभग १८० से २५० ली. पानी का प्रयोग किया जाता है।

चार सदस्यों के परिवार के लिए आधारभूत घरेलू पानी की आवश्यकता पचास ली. स्वीकृत की गई है।

एक ली. गन्दा पानी लगभग ८ ली. ताजे पानी को प्रदूषित कर देता है।

टपकनेवाले टैप से दिन भर में लगभग ३८० ली. जल नष्ट हो जाता है।

षडयन्त्र के बारे में समाचार जानकर राजा शांतिदेव अपनी पत्नी और बेटे को भाग जाने में सहायता करता है। सेनापति बीर सिंह के आदमी उस पार आक्रमण करते हैं, किन्तु वह अपनी रक्षा करता है...
3
आर्य
अज्ञात राजकुमार का रहस्य
Art : Gandhi Ayya
राजा छत पर चढ़ने से गुण्डों को रोकता है। वह सीढ़ी के सबसे ऊपर के आदमी को गिरा देता है जिससे सीढ़ी गिर जाती है।
तुम, बीर सिंह !
तुम बचकर जा नहीं सकते !
इसे संभालो, यदि संभाल सकते हो !
उसे रोको !

राजा छत से नीचे कूदता है...
...और वीर सिंह के सिपाहियों की तलवारों और भालों से अपने को बचाता है...
...और पास में बहती नदी से ऊपर उठती हुई प्राकार-दीवार पर पहुँचता है...
और उसमें छलांग लगा देता है।
वह निश्चय ही डूब जायेगा !

राजा का
अंत हो गया।
तब तक रानी मोमबत्ती की रोशनी की सहायता से गुप्त मार्ग द्वारा रास्ता पाने की कोशिश कर रही है।
यह कहाँ खत्म होगा?
हे भगवान ! अब मैं क्या करूँ?
सुरंग की चट्टानी दीवारें नम हैं और वहाँ दम घुटता है। रानी एक चट्टान के एक टुकड़े से टकरा कर फर्श पर गिर जाती है। जब वह अपने को संभालने की कोशिश करती है तब उसके हाथ से मोमबत्ती छूट जाती है।
यहाँ तो घोर अंधकार है। मुझे बहुत सावधान रहना है। प्रकाश की एक किरण ! सुरंग क्या खत्म होनेवाला है?
मेरे बच्चे, रो नहीं ! हम लोग शीघ्र ही बाहर निकलनेवाले हैं।
दीवार में लगे ढीले शैल खण्डों से प्रकाश आ रहा है। वह कुछ शिला खण्डों को निकाल देती है जिससे ज्यादा रोशनी आने लगती है।
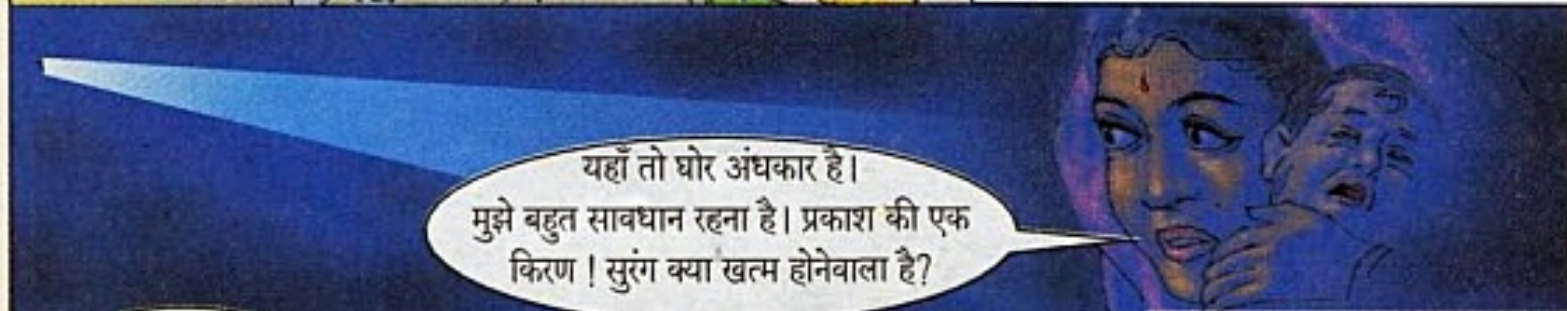
रानी एक पटिया को निकालती है और महसूस करती है कि अब सुरंग का अंत आनेवाला है।
वह पटिया को वापस अपने स्थान पर रखती है और पीछे घूमकर बच्चे को उठाना चाहती है, जो घुसक कर बहुत दूर चला गया है।
बच्चे, रुक जाओ, मेरे बच्चे!
थकावट के मारे रानी बेहोश हो जाती है।
एक बच्चा? वह किसका बच्चा है?
स्वामी जयानन्द प्रातः स्नान और पूजा के लिए बाहर आये हैं।
आह! इसके गले में लॉकेट है। और इसमें राजचिह्न है! क्या यह राजकुमार हो सकता है?
क्रमशः

मनोरंजन टाइम्स
A
B
C
D
E
F
I
जोड़ी मिलाओ, एक जोड़ी खाओ !
कुमारी मुर्गी के नाश्ते का समय हो गया। एक ही समान दो कीटों को खाने में उसकी मदद करो।
II
रंग भर मज़ा कर
जंगल का राजा है फ़ीका, बेजान !
लाओ मंजूषा रंग का, भर दो
उसमें प्राण।
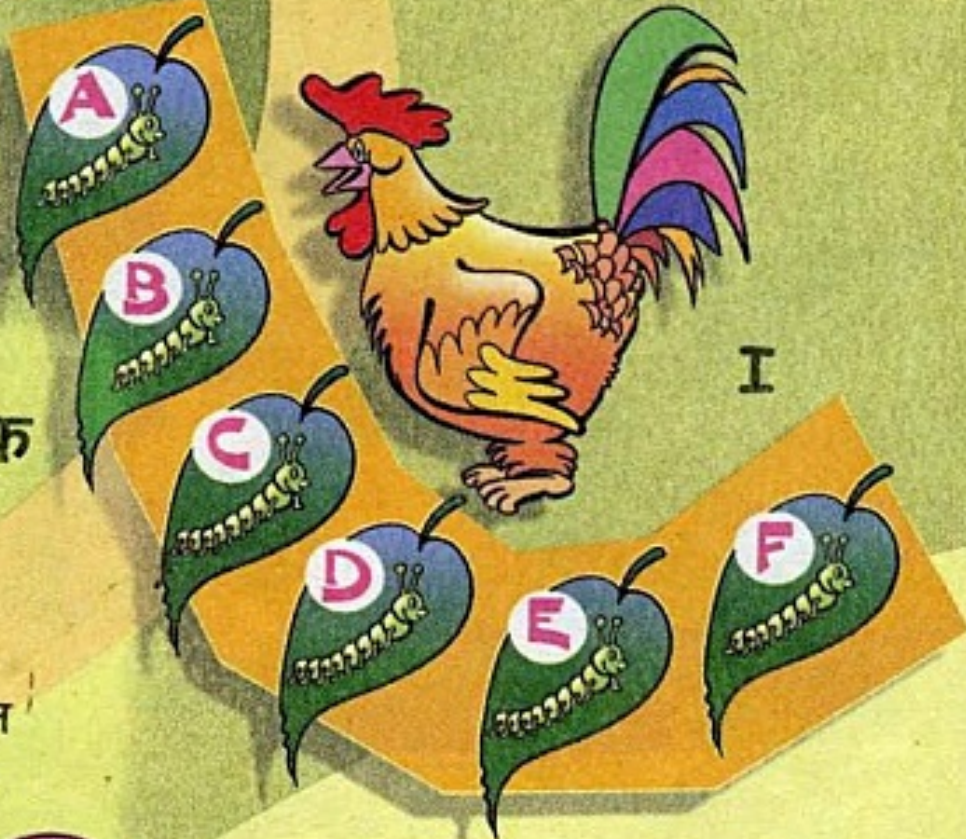
III

खड़े दो मित्र पूरा करो चित्र

मीना और रमेश फोटो खिचवाने के लिए खड़े हैं। लेकिन उनके शरीर के कई हिस्से गायब हैं। गायब हिस्सों का मिलान करो और उनके चित्र पूरे करो।
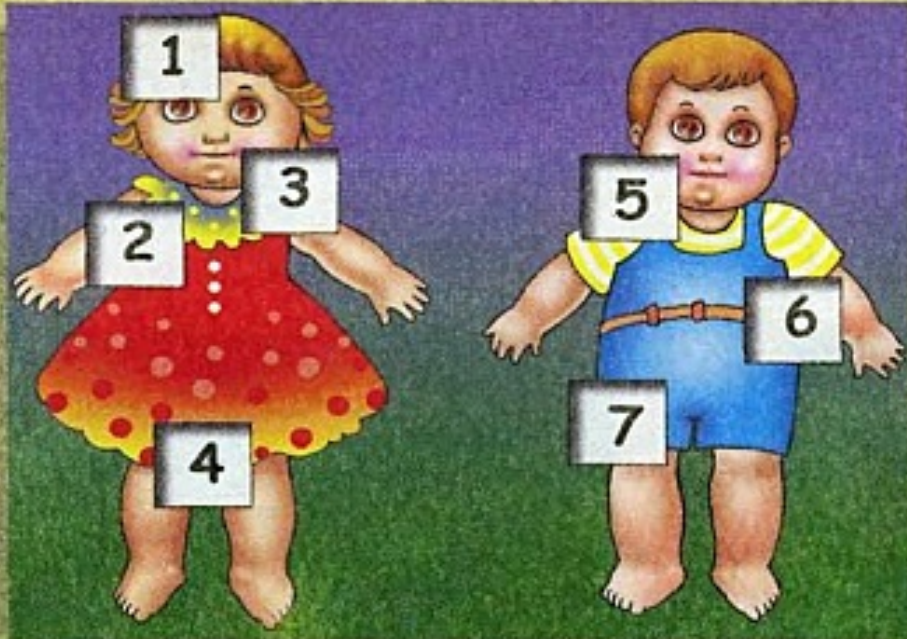
IV

भुलभुलैया का चक्कर

कपाली किनारे पर छूट गया है जबकि उसका बेटा नाव पर सवार है। पानी के भुलभुलैये से नाव तक जाने में उसकी मदद करो।

(उत्तर - पृष्ठ ६६ पर)

चित्र कैप्शन प्रतियोगिता

MAHANTESH C. MORABAD

SOURA

क्या तुम कुछ शब्दों में ऐसा चित्र परिचय बना सकते हो, जो एक दूसरे से संबंधित चित्रों के अनुकूल हो?

चित्र परिचय प्रतियोगिता, चन्दामामा,
प्लाट नं. ८२ (पु.न. ९२), डिफेन्स आफिसर्स कालोनी, इकाडुथांगल, चेन्नई -६०० ०९७.

जो हमारे पास इस माह की २० तारीख तक पहुँच जाए । सर्वश्रेष्ठ चित्र परिचय पर १००/-रुपये का पुरस्कार दिया जाएगा, जिसका प्रकाशन अगले अंक के बाद के अंक में किया जाएगा ।

बधाइयाँ

जुलाई अंक के पुरस्कार विजेता हैं :

टी. अभिषेक, C/o. श्री टी. सुभाष चन्द्र
मकान नं.३१-७-१, कुम्मुरी विथी
निकट - अलीपुरम गाँधी स्टैचू जं.
विसाखापतनम (आ.प्र.) - ५३० ००४.

विजयी प्रविष्टि

मैं हूँ बाल ब्रह्मचारी ।
मैं हूँ कन्याकुमारी ।।

मनोरंजन टाइम्स के उत्तर (पृष्ठ-६४-६५)

१. *जोड़ी मिलाओ :* सी और इ के कीड़े एक समान हैं।

३. *पूरा करो चित्र :* चित्रों के क्रम इस प्रकार हैं :
५, ६, ७, ३, ४, २, १

Printed and Published by B. Viswanatha Reddi at B.N.K. Press Pvt. Ltd., Chennai - 600 026 on behalf of Chandamama India Limited, No. 82, Defence Officers Colony, Ekkatuthangal, Chennai - 600 097. Editor : Viswam